ओ३म्

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अरावणः॥

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-38 | अगस्त | अंक-7

स्वतंत्रता दिवस की बहुत बहुत बधाई

स्वराज के प्रथम संदेशवाहक
महर्षि दयानन्द सरस्वती

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

आर्य संकल्प

संरक्षक
भाई विरेन्द्र, सभा प्रधान

सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मोबाईल-9006166168

सह सम्पादक
अरविन्द शास्त्री
मनोज शास्त्री
विवेक शास्त्री
प्रेम कुमार आर्य

सम्पादक मंडल
ज्ञानेश्वर शर्मा
सत्य प्रिय शास्त्री

कोषाध्यक्ष
मुकेश राय

स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
E-mail :
mantribraps@gmail.com

सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स, पटना

अनाचार बढ़ता है कब- सदाचार चुप रहता है जब

अनाचार और सदाचार ये दोनों शब्द हमारे जीवन से जुड़े हुए हैं। एक से व्यक्तित्व का ह्रास होता है तो दूसरे से व्यक्तित्व का विकाश हमारे समक्ष शिक्षा लेने के लिये समस्त संसार के सभ्य देशों का विशाल इतिहास ग्रंथ खुला हुआ है, जिसे देखकर हम उनके अभ्युदय और पतन को जान सकते हैं और अपने जीवन के लिये पाठ पढ़ सकते हैं। आर्य लोग जब तक उच्च वैदिक शिक्षा से अनुप्राणित होकर उस पर आचरण करते रहे, तब तक अभ्युदय और नि: श्रेयस को प्राप्त कर के अपना जीवन सफल करते रहे।

जगत् शुरू महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने लघु ग्रंथ आर्योदेश्य रत्न माला के उनसाठवें रत्न की सुरभि विखेरते हुए कहा है कि ''जो सृष्टि से लेके आज पर्यन्त सत्पुरुषों का वेदोक्त आचार चला आया है कि जिससे सत्य का ही आचरण और असत्य का ही त्याग किया है, उसको सदाचार कहते है।'' इसका अर्थ ये हुआ कि वेदानुकूल जीवन ही सदाचार का स्तंभ है और इससे विपरीत चलना मानों! अनाचार को बढ़ावा देने के समान है।

अपने इतिहास को देखते है तब ज्ञात होता है कि रामका समय आते-आते वैदिक परम्परा के भव्य भवन में कुछ दरारें पड़ गई थी। महाराज दशरथ ने भी संकटों के बीज वो दिये थे, अनाचार का बोल-बाला बढ़ने लगा था, किन्तु इस घोर और विषम परिस्थिति से समस्त परिवार और राष्ट्र का उद्धार करके सदाचार के सम्पादक मर्यादा पुरुषोत्तम राम और महामना भरत ने सुख और शांति का सम्राज्य स्थापित कर दिया।राम और भरत के औदार्यपूर्ण आचार को देखकर यह तो कह ही सकते हैं कि जो मनुष्य वेदोक्त धर्म और जो वेद से अविरूद्ध समृत्युक्त धर्म का अनुष्ठान करता है वह इस लोक में कीर्ति और मर कर सर्वोत्तम सुख को प्राप्त होता है।

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	सूची	1
3.	वेद मंत्र	2
4.	वेदों का प्रचार	4
5.	धर्म	10
6.	पूर्ण ब्रह्मचारी कौन?...	15
7.	एक अमूल्य चिन्तन	18
8.	आर्य समाज के नींव	19
9.	हम-तुम	23
10.	ग्लोवल वार्मिंग	28
11.	मानव मात्रके कल्याण	32

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

अगस्त

डर मत, पराक्रम कर

मा भेर्मा संविक्थ ऊर्जं धत्स्व विषणे वीड्वीसती
वीडयोथामूर्ज वधाथाम्। पाप्मा हतो न सोमः॥

(यजु. 6 । 35)

शब्दार्थ- (भा भेः) मानव! डर मत (मा संविक्था) कम्पायमान मत हो, मत घबड़ा। (ऊर्जम् घत्स्व) बल, साहस, पराक्रम धारण कर।(धिषणे) वाणी और विद्या का आश्रय लेकर और इन दोनों के आश्रय से (वीड्वीसती) बलवान होकर (वीडयेयाम्) पुरूषार्थ करो (ऊर्जम् दधाथाम्) पराक्रम करो, जौहर दिखाओ! (पाप्माः) पाप करनेवाला शत्रु, पापी (हतः) मारा जाए,नष्ट हो जाए (न सोमः) सोम्यगुणयुक्त, सदाचारी पुरुषों का नाश न हो।

भावार्थ-यदि संसार में पाप, अनाचार, भ्रष्टाचार, पाखण्ड, दम्भ, अधर्म बढ़ गया है, यदि दस्युओं, अन्यायों, अधर्मात्माओं और पाखण्डियों ने संसार के लोगों को आतंकित कर रक्खा है तो डरो मत, भयभीत मत होओ, घबराओ मत। उठो, खड़े हो जाओ और पराक्रम करो।

विद्याबल से अपने को विभूषित करो, वाणी का बल सम्पादन करो। विद्या और वाणी का आश्रय लेकर- इन दोनों से बलवान् बनकर दानवता को दग्ध करने के लिए, मानवता का त्राण करने के लिए संसार में कूद पड़ो, जौहर कर दो।

ऐसा पराक्रम करो कि जितने भी पापी, अत्याचारी, अनाचारी और पाखण्डी हैं उनमें से एक भी जीवित न रह पाए। पापियों को नष्ट-भ्रष्ट कर दो।

जो सौम्य हैं, पुण्यात्मा हैं, सदाचारीऔर श्रेष्ठ पुरूष हैं उनकी रक्षा करो।

■

वेद-मंत्र

आचार्य ज्ञानेश्वरार्य, रोजड़

तमित् सखित्वं ईमहे तं राये तं सुवीर्ये।
स शक्र उत नः शकदिन्द्रो वसु दयमानः ॥

ऋग्वेद 1/10/6

शब्दार्थ- **तम् इत्** - उसी ईश्वर के साथ **सखित्वम्** - मित्रता की **ईमहे**- इच्छा करते हैं, **तम्**- उसी की मित्रता करें **राये**- धन, बल, सामर्थ्य के लिये **तम्**- उसी की मित्रता करें, **सुवीर्ये**- पराक्रम के लिये बल, उत्साह के लिए **सः**- वह परमेश्वर **शक्र**- महान् समार्थ्य वाला है **उत नः**- और हमको भी **शकत्**- अनन्त सामर्थ्य से युक्त कर सकता है **इन्द्र**- वह परमैश्वर्यवान् है **वसु दयमानः**- विद्या, बल, चक्रवर्ती साम्राज्य को भी प्राप्त कराने वाला है।

व्याख्या- जो आकाश के समान व्यापक, सूर्य के समान प्रकाशवान्, वायु के समान निराकार है, जिसने समस्त ब्रह्माण्ड की रचना की है और पालन कर रहा है, जो हमें सृष्टि के आदि में वेदों का ज्ञान देता है, साथ ही हमारे अन्तःकरण में विराजमान होकर अच्छे-बुरे का परिज्ञान कराता है, उत्तम धर्मयुक्त कार्यों के करते समय मन में आनन्द, उत्साह, निर्भीकता उत्पन्न करता है और बुरे कार्यों के करते समय मन में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न करता है तथा हमारे मन, वचन व शरीर से किए जाने वाले कर्मों का साक्षी है और फलदाता है, उस परमेश्वर का मुख्य नाम ओ३म् है, वही हमारा परम मित्र है, परम हितैषी है, परम सुहृद है, परमसुख प्रदान करने वाला है। उसी अन्तर्यामी परमेश्वर के साथ मित्रता बनानी चाहिए क्योंकि वही ईश्वर हमें उत्तम धन, बल, उत्साह, सामर्थ्य प्रदान करता है और वही महान् पराक्रम, साहस, दृढ़ता प्रदान करने वाला है।

वह ईश्वर कण-कण में व्यापक है और निराकार है किन्तु सर्वशक्तिमान् होने के कारण वह ईश्वर शीघ्र ही समस्त ब्रह्माण्ड के लोक-लोकान्तरों की रचना कर देता है। जो मनुष्य उस अनन्त-विचित्र सामर्थ्य वाले परमेश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करता है। उस सच्चे भक्त को ईश्वर आश्चर्य उत्पन्न करने वाले अलौकिक सामर्थ्य से युक्त, विचित्र गुण-कर्म-स्वभाववाला बना देता है। उन विशिष्टि गुण-कर्म-स्वभाव, सामर्थ्य, ज्ञान, बल, योग्यता को प्राप्त करके ही मनुष्य सामाजिक, राष्ट्रीय, विश्व स्तर के अनुपम, अद्वितीय, पराक्रम वाले कार्यो को, असम्भव जैसे दिखाई देने वाले कार्यों को सम्पन्न कर देते हैं।

उस ईश्वर का नाम इन्द्र है क्योंकि वह परम शान्ति, सुख, तृप्ति, सन्तोष आदि ऐश्वर्यों को धारण करता है और धार्मिकों को इस ऐश्वर्य को प्रदान भी करता है। सच्चे ईश्वर की सच्ची

भावना से और सच्ची विधि से उपासना करने वाले उपासकों को निश्चित ही वह परम शक्ति, बल, ज्ञान-विज्ञान, सामर्थ्य प्रदान करता है। इसी ईश्वर प्रदत्त सामर्थ्य के कारण वे समाज राष्ट्रोद्धार के विशेष कार्यों को सम्पन्न करने का मन में संकल्प धारण करते है और त्याग-तप-पुरुषार्थ-बुद्धि-चातुर्य-कुशलता-नीति-साहस-संगठन आदि गुणों के कारण उन प्रयोजनों में शीघ्र ही सफल भी हो पाते हैं।

उस एक निराकार, निरंजन, नायक, शर्मद, नरेश की उपासना करने वाले उपासक न केवल अपने व्यक्तिगत अभावों, न्यूनताओं निर्बलताओं, कुटेवों, कुव्यसनों व रोगों को दूर करते हैं अपितु, पारिवारिक समस्याओं, उलझनों, वैर-विरोधों को समाप्त कर देते है, और सामाजिक व राष्ट्रीय स्तर की समस्त समस्याओंका समाधान करके, राष्ट्र को सुसंगठित भी कर देते हैं। इतना ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में एक अखण्डित चक्रवर्ती साम्राज्य की भी स्थापना कर देते हैं। समस्त देशों में रहने वाले लोगों के भिन्न-भिन्न भाषा, भूषा, भोजन, भक्ति, भगवान्, संविधान, परम्पराओं, रीति-रिवाजों, मान्यताओं से सम्बन्धित परस्पर विरोधों को दूर करके, उन सब में एकत्व की स्थापना कर देते हैं, यह सब ईश्वर से प्राप्त विशेष ज्ञान-बल के आधार से ही संभव है।

इसलिए परमेश्वर हम आपसे अत्यन्त गद्-गद् होकर प्रार्थना कर रहे हैं कि आप हमारे परम सखा बन जाओ, हमारा पथ प्रदर्शनकरो, हमारे मार्गदर्शक बन जाओ, आपके आदेशानुसार ही हम कार्यों को करेंगे। आपकी मित्रता से ही हम अपने सभी आन्तरिक शत्रुओं का विनाश करके, फिर बाहरी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके, विश्व में पुनः चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना करने में समर्थ हो जाएँ ऐसा सामर्थ्य, बल, उत्साह, पराक्रम हमारे अन्तःकरण में भर दो, यह सबआपकी कृपा से ही संभव है। हम तुच्छ जीव अपने सामर्थ्य से तो कुछ भी नहीं कर सकते। आप पर ही पूरा भरोसा है, आप ही पूरा करेंगे।

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा, बिहार के मार्गदर्शन में मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा गया एवं नालंदा जिला आर्य सभा के तत्वावधान में संयुक्त

आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर

तिथि : 13 से 20 सितम्बर 2015 तक
स्थान : आर्य समाज मंदिर मथुरिया मुहल्ला बिहार शरीफ (नालंदा)
मुख्य प्रशिक्षक- आचार्य बिजय कु0 नैष्ठिक,उ.प्र.
पं0 रामायण शर्मा,नरकटियागंज
पं0 अरविन्द शास्त्री, पटना
पं0 मनोज शास्त्री, पटना
पं0 सत्योम शास्त्री, औरंगाबाद
शिविर में भाग लेने के लिए सम्पर्क करें-
सम्पर्क- 9334139266, 9334980556

वेदाविर्भाव एवं ब्रह्मादि ऋषियों द्वारा सर्गारम्भ में वेदों का प्रचार

लेखक- मनमोहन कु. आर्य, देहरादून

महर्षि दयानन्द सरस्वती के सक्रियरूप से सार्वजनिक जीवन में पदार्पण के अवसर पर सारी दुनिया को यह तथ्य स्मरण नहीं थे कि वेदों का आविर्भाव ईश्वर के द्वारा प्राचीन व आदि ऋषियों पर कैसे हुआ? महर्षि दयानन्द ने सत्य की खोज करते हुए पाया कि ईश्वर सत्य, चित्त व आनन्दस्वरूप, निराकार, सर्वव्यापक, सर्वान्तरयामी, अजन्मा, अविनाशी, अनादि, अमर आदि स्वरूप वाला है। ऐसे स्वरूप वाले ईश्वर से ही सारा जगत जिसमें सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, सभी ग्रह व उपग्रह, ब्रह्माण्ड, लोक-लोकान्तर, निहारिकायें व तारा समूह आदि सम्मिलित हैं, अस्तित्व में आया है अर्थात् ईश्वर इन सबका निमित कारण है। बिना रचयिता के रचना कभी नहीं हुई है और न हो सकता। इतना बड़ा ब्रह्माण्ड यदि ईश्वर ने बनाया है तो वह स्वाभाविक रूप से बुद्धि व ज्ञान का अक्षय भण्डार व खजाना है। ब्रह्माण्ड के आकार प्रकार को देखकर सिद्ध होता है कि वह अनन्त है। अनन्त सत्ता सदैव अनादि ही होगी। स-आदि अर्थात् जिनका आरम्भ हुआ है, ऐसी सत्तायें विनाशी व मरणधर्मा होती हैं। यदि ईश्वर अनादि न होकर आदि अर्थात् उत्पत्तिधर्मा मानें, तो जन्म लेने व मृत्यु को प्राप्त होने वाले इस ईश्वर को जनक व पिता भी स्वीकार करना पड़ेगा जिससे अनावस्था दोष उत्पन्न होगा। अतः ईश्वर अनादि व अनन्त ही सिद्ध होता है। ज्ञानपूर्वक की गई कोई भी रचना किसी चेतन सत्ता द्वारा ही सम्भव है। यह ब्रह्माण्ड क्योंकि अनन्त है, अतः ईश्वर अक्षय ज्ञान के भण्डार के साथ सर्वशक्तिमान भी सिद्ध होता है। ऐसा ईश्वर जब भी प्राणधारी रचना तथा मनुष्यों की उत्पत्ति करेगा तो उनके जीवन निर्वाह के लिए उन्हें स्वाभाविक व नैमित्तिक ज्ञान अवश्य ही देगा अन्यथा उस पर यह आरोप आयेगा कि वह ज्ञान देने में अक्षम है। दूसरी ओर वह मनुष्य बिना भाषा व ज्ञान के सम्भवतः एक दिन भी जीवनयापन न कर सके। पशुओं-पक्षियों की बात और है, उन्हें ईश्वर ने इतना स्वभाविक ज्ञान दिया है कि वह अपने जीवन के सभी कार्य सरलता से कर लेते हैं। परन्तु ईश्वर ने मनुष्यों में यह भेद किया है कि वह उन्हें प्रदत्त अल्प वा सीमित स्वाभाविक ज्ञान से अपने सभी दैनन्दिन कार्य सम्पादित

नहीं कर सकते। इसके लिए नैमित्तिक ज्ञान की आवश्यकता है। यह भाषा सहित वेद का नैमित्तिक ज्ञान ईश्वर से एक गुरु के रूप में आदि सृष्टिकालीन मनुष्यों को प्राप्त होता है।

ईश्वर ने ज्ञान की प्राप्ति के लिए पाँच-ज्ञानेन्द्रियाँ बना कर प्रत्येक मनुष्य को दी हैं। इन इन्द्रियों की सार्थकता तभी होती है जब मनुष्य को इसके साथ भाषा का ज्ञान दिया जाये। वर्तमान में माता-पिता अपने शिशु को भाषा का ज्ञान देते हैं। यह पूरी प्रक्रिया प्राकृतिक एवं प्राचीन है। आदि सृष्टि में माता-पिता तो थे नहीं, अतः माता-पिता के सभी कार्य ईश्वर ने ही सम्पादित किए। उसने सभी आदिकालीन पहली पीढ़ी के मनुष्यों को स्वाभाविक ज्ञापन के साथ भाषा का ज्ञान भी प्रदान किया। वेदों के आधार पर हम जानते हैं कि ईश्वर की भाषा वैदिक संस्कृत है। ऐसी ही भाषा का ज्ञान परमात्मा ने सभी स्त्री पुरुषों को सृष्टि के आरम्भ में दिया था। जिस प्रकार एक अन्तिम कारण होता है जिसका अन्य कोई कारण नहीं होता, उसी प्रकार यहाँ पर आदि स्त्री पुरुषों को ईश्वर ने भाषा का ज्ञान दिया यह स्वीकार करना पड़ता है। अन्य कोई विकल्प ही नहीं है। इसकी पुष्टि इसी से होती है कि संस्कृत सर्व प्राचीन भाषा है जिसका आधार वैदिक संस्कृत है। वैदिक संस्कृत मूल भाषा है जो मनुष्यों द्वारा नहीं बनाई गई है, [illegible] ईश्वर प्रेरित या दैवीय है। जिस प्रकार हम [illegible] से पदार्थों को लेकर उनका उपयोग कर नाना प्रकार के पदार्थों को बनाते हैं, परन्तु वह मूल पदार्थ जिनका हम उपयोग करते हैं, उन्हें [illegible] नहीं बनाते, वह ईश्वर निमित हैं, इसी प्रकार मूल भाषा ईश्वर से प्राप्त होती है जिसके आधार पर उसमें अपभ्रंस, देश काल आदि कारणों से समय-समय पर विकार व परिवर्तन होते रहने से मानवीय भाषायें बनतीं हैं। वैदिक आर्य विद्वानों ने भाषा की उत्पत्तिव इतिहास पर विचार करते हुए यही निष्कर्ष निकाले हैं। ईश्वर द्वारा आदि सृष्टि के सभी मनुष्यों को भाषा का जो ज्ञान दिया गया वह उसने जीवस्थ स्वरूप से प्रेरणा द्वारा दिया।जिस प्रकार हम परस्पर वाणी व भाषा द्वारा एक-दूसरे को प्रेरित करते हैं, उस वाणी के पीछे आत्मा को ही प्रेरणा होती है, उसी प्रकार ईश्वर जीवात्मा के भीतर अपनी प्रेरणा से जीवात्मा में भाषा, उसके भावों व अर्थों का प्रकाश कर देता है। इसके होने से सभी मनुष्य आरम्भ में सभी आवश्यक व्यवहार करने में समर्थ हो जाते हैं।

भाषा के साथ मनुष्यों को ज्ञान की भी आवश्यकता है जिससे वह सत्यासत्य को जान सकें। ईश्वर है या नहीं, है तो कैसा है, क्या

करता है, उसका स्वरूप कैसा है, हम कौन है, हमारा स्वरूप कैसा है, हमारे जीवन का उद्देश्य क्या है, क्यों हमारा जन्म हुआ है, हमारे जीवन का जो उद्देश्य है उसकी पूर्ति कैसे होगी, हमें अन्य प्राणियों के प्रति कैसा व्यवहार करना है, आदि अनेकानेक प्रश्न हैं, जिनका उत्तर सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न मनुष्य प्राप्त नहीं कर सकते। इसके लिए भी उन्हें ईश्वर की सहायता की अपेक्षा है। यह सहायता ईश्वर वेदों का ज्ञान प्रदान कर पूरी करता है। सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने चार सबसे अधिक पवित्र आत्माओं, अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद, एक-एक वेद का ज्ञान दिया। यह ज्ञान ईश्वर ने इन जीवों वा ऋषियों की आत्माओं में प्रकट किया। सृष्टि की आदि से परम्परा चली आ रही है जिसमें कहा गया है कि चारों वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तकें हैं। महर्षि दयानन्द ने भी इसकी पुष्टि की है और लोगों को चुनौती दी कि जो चाहे उनकी वेद विषयक व अन्य मान्यताओं पर उनसे वार्तालाप व शास्त्रार्थ कर सकता है। उन्होंने अपनी तरफ से सभी सम्भावित प्रश्नों के समाधानपरक उत्तर अपनी पुस्तकों में स्वयं ही दिए हैं। उनके अनुसार ईश्वर ने मनुष्यों को चार वेदों में ज्ञान, कर्म,उपासना व विज्ञान विषयों का आवश्यक ज्ञान दिया है जिसको जानकर व चिन्तन कर वह सभी प्रश्नों के उत्तर पा सकता है और वेदाध्ययन से जो मेधा व विवेक उत्पन्न होता है, उससे स्वयं विज्ञान को विकसितकर जीवन को समुन्नत कर सकता है और साथ ही विज्ञान से होने वाले अनर्थों व बुराईयों में न फँसकर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

आईये, स्वामी दयानन्दने सत्यार्थप्रकाश में वेदों के आविर्भाव एवं उसके प्रचार के बारे में जिन तथ्य व रहस्यों का उद्घाटन किया है, उन्हीं के शब्दों में उन्हें देख लेते हैं। वह लिखते है- प्रथम सृष्टि के आरम्भ में परमात्माने अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा, इन चार ऋषियों के आत्मामें एक-एक वेद का प्रकाश किया।.... ब्रह्मा के आत्मा में अग्नि आदि के द्वारा स्थापित कराया।.... *जिस परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि चारों महर्षियों के द्वारा चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराये और उस ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से ऋग्, यजु; साम और अथर्ववेद का ग्रहण किया।..... वे ही चार सब जीवों से अधिक पवित्रात्मा थे। अन्य, उनके सदृश नहीं थे। इसलिए पवित्र विद्या का प्रकाश उन्हीं में किया।* ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में स्वामी

दयानन्दजी लिखते हैं कि उन अग्नि आदि चार मनुष्यों के ज्ञान के बीच में वेदों का प्रकाश करके उनसे ब्रह्मादि के ज्ञान के बीच में वेदों का प्रकाश कराया था। इन ऋषि वचनों को पढ़कर ज्ञात होता है कि ईश्वर ने अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा ऋषियों वा मनुष्यों को एक-एक वेद का ज्ञान दिया। (ब्रह्माजी पहले ऐसे आदि मनुष्य-पुरुष ऋषि हैं जिन्हें इन चार ऋषियों से एक-एक करके चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त हुआ। इसके पश्चात सृष्टि के आदि में जो अन्य स्त्री व पुरुष उत्पन्न हुए थे, उन्हें ब्रह्माजी ने वेदों का ज्ञान कराया। यहाँ यह शंका होती है कि क्या उसके बाद, अन्य-अन्य तीन वेदों का ज्ञान प्राप्त किया अथवा नहीं। हमें लगता है कि इस विषय में हमारे शास्त्र व आप्त वचन आदि उपलब्ध नहीं हैं। इसमें क्या रहस्य है? सामान्य स्थिति में हमें लगता है कि अग्नि, वायु आदि चार ऋषियों ने भी अन्य-अन्य तीन वेदों का ज्ञान प्राप्त किया होगा जो उन्हें ईश्वर से प्राप्त नहीं हुआथा। यह प्रक्रिया इस प्रकार रही होगी कि ब्रह्माजी को ईश्वरीय प्रेरणा रही होगी कि वह उन चार ऋषियों से चारवेदों का ज्ञान प्राप्त करें और अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा ऋषियों को प्रेरणा हुई होगी कि वह ब्रह्माजी को वेदों का ज्ञान करायें। इसके लिए पांचों ऋषि एक स्थान पर, ईश्वरीय प्रेरणा से, उपस्थित हुए होंगे। वैदिक भाषा का ज्ञान ब्रह्माजी सहित आदि सृष्टि में उत्पन्न सभी मनुषयों को पहले ही जीवस्थ स्वरूप से ईश्वर ने कराया था। जिस प्रकार गुरु पाठशाला में या गुरुकुल में विद्यार्थियों को बैठाकर उनके सम्मुख स्वयं बैठकर व बोल कर उपेदश द्वारा ज्ञान कराताहै, इसी प्रकार पहले अग्नि ऋषि ने ब्रह्मा, अग्नि, आदित्य व अंगिरा को यजुर्वेद का ज्ञान कराया होगा। इसी प्रकार आदित्य व अंगिरा ने अन्य-अन्य चार ऋषियों को सामवेद व अथर्ववेद का ज्ञान कराया होगा। यह स्वाभाविक है कि जब अग्नि ब्रह्माजी को ऋग्वेद का ज्ञान करा रहे होंगे तो वायु, आदित्य व अंगिरा खाली नहीं बैठे होंगे, वह भी सुन रहे होंगे और उन्हें भी ज्ञान हो गया होगा। हो सकता है कि कुछ विद्वान व पाठक हमारे इस विचार से सहमत न हों। उनसे हम अपेक्षा करते हैं कि वह इससे जुड़े प्रश्नों का समाधान करें। यहाँ यह भी विदित होता है कि अग्नि आदि ऋषियों ने मन्त्रोचार के साथ मन्त्रों के अर्थ भी बताये होंगे अन्यथा उन्हें व अन्य ऋषियों को अर्थ ज्ञात न होते। अन्य ऋषियों ने भी अग्नि ऋषि का अनुसरण किया होगा। इससे यह निष्कर्ष निकलताहै कि ब्रह्मा, वायु, आदित्य व अंगिरा को साथ-साथ चार वेद अर्थसहित ज्ञान हुए

होंगे।) हम इस सम्बन्ध में विद्वानों व पाठकों की प्रतिक्रिया जानना चाहते हैं।

पाँच ऋषियों के वेदज्ञ हो जाने पर, परमात्मा ने अन्य जो युवा स्त्री व पुरुष उत्पन्न किए थे, उन्हें वेदों का ज्ञान प्रदान किया जाना उनका लक्ष्य रहा होगा क्योंकि इनमें से किसी एक या सबका खाली बैठना सम्भव नहीं था। हम अनुभव करते हैं कि इसके लिए उन सभी स्त्री-पुरुषों को पाँच कक्षाओं में बाँटकर एक-एक कक्षा को एक-एक ऋषि ने उपदेश-श्रवण-विधि से अध्ययन कराया होगा। और धीरे-धीरे सभी स्त्री-पुरुषों को वेदों का ज्ञान हो गया होगा। हमारा अध्ययन व विवेक हमें बताता है कि प्राचीन काल के इन मनुष्यों की शारीरिक बल व बुद्धि की क्षमता आज के मनुष्यों से कहीं अधिक थी। इसलिए उनका वेदों को स्मरण करना व समझना आज के लोगों से कहीं अधिक सरल था। इसके साथ वेदों के ज्ञान के साथ उन्हें अपने भोजन आदि का भी ज्ञान हो गया होगा। वृक्षों पर फल व गो-दुग्ध तो पर्याप्त रहा ही होगा जिससे इन आदिवासियों ने अपने आहार की समस्या का निदान किया होगा। ऋषि दयानन्द ने पूना में दिये छठे प्रवचन में कहा है कि आरम्भ के पाँच वर्षों तक इन मनुष्यों में बालकों की तरह कर्मफल व्यवस्था आरम्भ नहीं हुई थी। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि इस समयावधि में इनमें कामवासना आदि का विचार नहीं आया होगा। इस बीच इन्होंने कृषि कार्यों, गोपालन व संबर्धन, रूई से वस्त्र निर्माण आदि, जिसका ज्ञान वेदों से प्राप्त हो गया होगा, इन्होंने कर लिया होगा और पाँच वर्षों में सब सामान्य रूप से पूर्णतः वेदों के अनुसार जीवन व्यतीत करने लगे होंगे। इसके साथ ही यज्ञ, सत्संग, अध्ययन-अध्यापन, स्वाध्याय, ज्ञान-विज्ञान की उन्नति के कार्य भी आरम्भ होकर अनेक सफलतायें प्राप्त कर ली गई होंगी और पाँच वर्ष पश्चात् इनको सामान्य जीवन व्यतीत करने में किसीप्रकार की कोई समस्या नहीं रही होगी। यदि कभी कोई समस्या आती होगी तो उसका समाधान वेद के आधार पर निकल जाता होगा। आगे सृष्टि किस प्रकार आगे बढ़ी इसका कुछ इतिहास तो उपलब्ध है व अनुमान से भी उसे जाना जा सकता है।

यह भी चर्चा कर लेना समीचीन है कि वैदिक प्राचीन साहित्य व स्वामी दयानन्दके ग्रन्थों से यह ज्ञात नहीं होता कि अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा आदि चार ऋषियों ने परस्पर या ब्रह्माजी से तीन-तीन वेदों के ज्ञान का आदान-प्रदान किया अथवा नही। यह भी विदित नहीं होता है कि क्या सृष्टि के आदि काल में उत्पन्न अन्य स्त्री व पुरुषों को प्रथम उत्पन्न चार ऋषियों ने वेदाध्ययन-अध्ययन कराया अथवा नहीं। जैसा कि सुविदित तथ्य है

कि कोई भी विद्वान खाली नहीं बैठ सकता, व वह भी तब, जबकि उसके आस-पास अशिक्षित-ज्ञानेच्छु व अज्ञानी लोग हों। अतः यदि इन ऋषियों का ब्रह्मा जी को ज्ञान प्राप्त कराने के एकदम बाद संसार से प्रस्थान न हुआ होगा, तो हमें लगता है कि निश्चित रूप से इन्होंने पूर्व ही परस्पर वा ब्रह्माजी से अन्य-अन्य तीन वेदों का ज्ञान प्राप्त कर अध्यापन पढ़ाने का कार्य अवश्य किया होगा। इन ऋषियों ने ब्रह्मा जी की भाँति विवाह करके अपनी सन्तति आगे बढ़ाई या नहीं, यह भी पता नहीं चलता। इन चार ऋषियों के बारे में हमारा वैदिक साहित्य मौन है। इसका उल्लेख सम्भवतः इसलिए नहीं किया गया कि इन्होंने विवाह किये ही न हों? इन चार ऋषियों द्वारा परस्पर अन्य-अन्य वेदों के ज्ञान का आदान-प्रदान अथवा ब्रह्मा जी से इसको प्राप्त करने के पीछे एक कारण यह रहा हो सकता है कि ईश्वर की प्रेरणा इन्हें एक-एक वेद के ज्ञान तक सीमित रखने की रही हो। यह समाधान ठीक भी हो सकता है, और नहीं भी। यहाँ विद्वानों से अपने अध्ययन व विवेक से इस समस्या का समाधन अपेक्षित है। एक अन्य प्रश्न भी सामने है। सृष्टि के आदि काल में युवा पुरुषों के समान युवती स्त्रियाँ भी अवश्य उत्पन्न हुई होंगी। इन्हें भी ब्रह्माजी ने पुत्रीवत् वा भगिनीवत् वेदों का ज्ञान दिया होगा। यद्यपि वैदिक परम्परा में स्त्रियों को स्त्रियों से ही ज्ञान प्राप्त करने की परम्परा है, अतः यह अपवाद स्वरूप हुआ प्रतीत होता है, क्योंकि सृष्टि के अमैथुनी होने से यह अपवाद आवश्यक था। ब्रह्माजी से वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लेने के पश्चात इन स्त्रियों ने स्त्रियों को अध्ययन कराना आरम्भ कर दिया होगा, ऐसी सम्भावना प्रतीत होती है।

आर्य अभिनंदन समारोह

सभी आर्य सन्यासी, विद्वान, महोपदेशक, उपदेशक, भजनोपदेशक, ढोलक वादक जिनकी आयु 60 वर्ष या उससे अधिक है, हम उन सबका अभिनंदन करेगें।

योग्य पात्र सादर आंमत्रित हैं। कृप्या अपना परिचय निम्न पते पर भेजें।

नोटः- केवल वे ही सज्जन लिखें जिन्होने सम्पूर्ण जीवन आर्य समाज के लिए लगाया है। कहीं अध्यापक या अन्य कोई नौकरी या कार्य नहीं किया हो।

समारोह का विवरण :

अध्यक्षता : स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

स्थान : गुरूकुल, गौतम नगर, नई दिल्ली
समय : प्रातः 09 बजे से 01 बजे तक
दिनांक : 19 सितम्बर, शनिवार, 2015

ठाकुर विक्रम सिंह

पताः A41, IInd तल, लाजपत नगर पार्ट II,
निकट लाजपत नगर मेट्रो स्टेशन,
नई दिल्ली-110024
फोन : 011-45791152/29842527

धर्म : एक वैज्ञानिक विश्लेषण

वेदाचार्य डॉ. रघुवीर वेदालंकार
उपाचार्य, रामजस कॉलेज, दि.वि.वि

धर्म की प्रशंसा एवं आवश्यकता के विषय में बहुत कुछ कहा गया है। यहाँ उसका पिष्टपेषण अभीष्ट नहीं है, केवल संक्षेप में ही कुछ कह देना पर्याप्त होगा। यहाँ हमारा उद्देश्य धर्म के स्वरूप पर विचार करना है। एक एवं सुहद् धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः। धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षित; आदि उक्तियाँ इस विषय में हैं। अथर्ववेद में तो पृथिवी को ही 'धर्मणा धृता' धर्म के द्वारा स्थित कहा गया है। एक कविने तो धर्म से रहित व्यक्ति को पशुओं के तुल्य ही माना है। इस प्रकार धर्म की आवश्यकता तो निर्विवाद है। प्रश्न है कि धर्म का स्वरूप क्या है?

इस विषय में भी धर्म के अनेक लक्षण एवं परिभाषाएँ दी गयी हैं। कही 'अहिंसा परमो धर्मः' कहकर अहिंसा को भी परम धर्म मान लिया गया तो कहीं पर 'नास्ति सत्यात् परो धर्मः नानृतात् पातकं परम्' कह कर सत्य को ही परम धर्म कहा गया है। प्रश्न है कि क्या सर्वत्र, सर्वदा अहिंसा एवं सत्य का पालन किया जा सकता है? यदि किया ही जाए तो क्या इसमें अपना तथा अन्य जनों का जीवन सुरक्षित रह सकता है? चोर, डाकू, लुटेरे, आतंकवादी, के साथ यदि आप अहिंसा परमो धर्मः का जप करेंगे तो जीवन नहीं बचेगा। वहां दुष्ट हिंसा अनिवार्य है। वस्तुतः यह परिभाषा बौद्ध काल की है, जबकि सम्राट् अशोक ने युद्ध का मार्ग छोड़कर अहिंसा का मार्ग अपना लिया था। जैनमत में भी इसका अधिक प्रचार किया गया। हिंसा का मार्ग छोड़कर अहिंसा का मार्ग अपना कर यह देश बहुत कमजोर हो गया, शौर्य समाप्त हो गया। कुछ लोगों का सम्भवतः यह भी भ्रम है कि अहिंसा के बल पर ही भारत को स्वतन्त्रता मिली। ऐसा कहना स्वतन्त्रता की बलि वेदि पर हंस-हंस कर अपने प्राणों की आहुति देने वाले वीरों का अपमान है। अंग्रेजों के दिलों को इन वीरों के बलिदानों ने, नेताजी की आजाद हिन्द फौज ने तथा भारतीय जनता के विप्लव ने दहला दिया था। व्यक्तिगत, सामाजिक तथा राष्ट्रिय जीवन में दुष्टों की हिंसा अनिवार्य हैं हाँ, निरपराध की हिंसा नहीं करनी चाहिए, यही धर्म है।

सत्य का भी यही हाल है। यह भी सार्वकालीक एवं सार्वदेशिक धर्म नहीं बन

सकता। प्रसिद्ध उदाहरण है कि आपके सामने से कोई गाय गयी है तथा थोड़ी देर में वधिक आकर पूछता है कि गाय किधर गयी, तो क्या यहाँ पर आपका सत्य बोलना धर्म है? कदापि नहीं। ऐसे में मिथ्या बोलकर ही गाय की रक्षा की जा सकती है, यही धर्म है। धर्म वह है, जिससे प्राणियों की रक्षा हो। इसीलिए योग दर्शन के भाष्यकार व्यास जी कहते हैं कि कही हुई वाणी से यदि प्राणियों का विनाश होता हो तो कहा सत्य नहीं मानी जायेगी। इस प्रकार सिद्धान्त निश्चित हुआ कि स्वार्थ वश या किसी को धोखा देने के लिए मिथ्या नहीं बोलना चाहिए। प्राणियों के उपकारार्थ मिथ्या बोलना भी धर्म है।

मनु ने भी धर्म के लक्षण कहे हैं। इनमें वेद, स्मृति, सदाचार तथा अपने आत्मा को जो प्रिय लगे ये चार धर्म के साक्षात् लक्षण माने गये हैं, इनमें वेद तथा स्मृति धर्म के लक्षण नहीं, अपितु उद्‌गम स्थान हैं। वेदों तथा स्मृतियों में जो कुछ कहा गया है, सज्जनों का आचरण तथा आत्मप्रिय कार्य धर्म हैं, किन्तु यह तो तलाश करना पड़ेगा कि वहाँ पर क्या कहा गया है?

मनु ने ही अन्यत्र धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय विनिग्रह आदि को धर्म का लक्षण कहा है। यह परिभाषा भी अपूर्ण है। इसलिए स्वामी दयानन्द ने इन लक्षणों में अहिंसा को भी जोड़ दिया। इसी प्रकार इनमें अन्य गुणों को भी जोड़ा जा सकता है। अक्रोध को भी यहाँ पर धर्म का लक्षण माना गया है, किन्तु यह अनिवार्य प्रतीत नहीं होता। क्षमा को भी यहां पर धर्म का लक्षण माना कहा है, किन्तु सर्वत्र इसका पालन भी नहीं किया जा सकता न ही करना चाहिए। यथा, पृथिवी राज ने मुहम्मद गौरी को सोलह बार क्षमा कर दिया। यह धर्म था या अधर्म? यह विचारणीय है। यह सरासर अधर्म था। विधर्मी शत्रु को क्षमा करने का अर्थ अपना विनाश है। अपना ही नहीं,अपितु प्रजा का भी विनाश है, क्योंकि पृथिवीराज तो राजा था। धर्म यही कि अन्यायी विधर्मी को कब्जे में आने पर प्रथम बार में ही समाप्त कर दिया जाए। तरावडी के प्रथम युद्ध में पृथिवी राज के भाई ने मुहम्मद गौरी को घायल करके छोड़ दिया, जान से नहीं मारा। इसी गौरी ने पृथिवी राज को पकड़ में आते ही उसकी आंखे फुडवा दी तथा बन्दी बना कर अपने देश ले गया। क्षत्रियों में शरणागत की रक्षा को भी धर्म माना गया है, किन्तु यदि कोई दुष्ट इसका लाभ उठाकर छल-कपट पूर्वक राज्य में आ जाता है तो उस अन्यायी को अभयदान देना धर्म नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अवसर पाते ही वह दुष्ट आपके जीवन को संकट में डाल देगा। हाँ, कोई निष्कपट भाव से शरण में आ रहा है तो

उसकी रक्षा करना धर्म है। गौर देश के शासक अलाउद्दीन के भय से गजनी का शासक मीर वहां से भागकर भारत आ गया। पृथिवी राज चौहान ने उसको शरण दे दी। यह महमूद गजनवी का वंशज था, इसे शरण देने से गौरी पृथिवी राज का शत्रु बन गया।

शास्त्रों में धर्म की जो परिभाषाएँ दी गयी हैं, उनमें दो-तीन पर यहाँ विचार किया जाता है। वैशेषिक दर्शन में कहाँ गया है- यतोऽभ्युदयनिश्रेयस् सिद्धि : स धर्म :। अर्थात् जिससे इस लोक तथा मोक्ष की सिद्धि हो, वहीं धर्म है। कुछ स्पष्टता नहीं है इसमें कि वह धर्म नामक तत्त्व है क्या? दूसरी बात इस लोक की सिद्धि सफलता का क्या अर्थ है? लोक में धन को ही सर्वप्रमुख माना जाता है। धन के आधार पर ही सुख प्राप्ति होती है। यह भी स्पष्ट है कि धन तो ऐसे स्रोतों में भी प्राप्त होता है जिन्हें हम निन्दनीय समझते हैं तो धर्म क्या हुआ। इसका उत्तर यह है कि वहाँ पर अम्युदय - अभि+उदय शब्द पढ़ा है। इसका अर्थ है सभी प्रकार की उन्नति। जीवन का लक्ष्य सर्वाड्गीण उन्नति है, केवल धन प्राप्ति नहीं। केवल धन प्राप्ति ही जीवन की सफलता नहीं है। सुख के साथ शान्ति भी जीवन का लक्ष्य है। यह धन के आधार पर नहीं मिल सकती। जिन कार्यों के द्वारा तन-मन प्रसन्न रहे, बुद्धि शान्त रहे तथा आत्मा आनन्द युक्त हों, वे ही धर्म हैं। अन्याय से कमाए गये धन में ये गुण नहीं हो सकते। मोक्ष की सिद्धि भी साथ जुड़ी है। यह तो सत्य, न्याय, अहिंसा, अस्तेय, यज्ञ,ईश्वरभक्तिआदि के आधार पर ही सम्भव हैं। ऐसे गुण ही संसार में शान्ति स्थापित कर सकते हैं। इसीलिए महाभारत कार ने कहा 'धर्मो धारयते प्रजा:'। धर्म ही प्रजा को धारण करता है, विनाश से बचाता है। व्यास जी ने धर्म का एक व्यवहारिक लक्षण दिया है कि ' आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां ने समाचरेत्' अर्थात् जो कार्य आपको अपने लिए अच्छे न लगे, उन्हें दूसरों के लिए भी मत करो, यही धर्म सर्वस्व है।

यह तो धर्म का एक व्यवहारिक एवं दार्शनिक स्वरूप हुआ, किन्तु संसार में सभी मनुष्यों ने तो इसेइस रूप में ग्रहण नहीं किया हुआ। प्रश्न है कि जो व्यक्ति धर्म के किसी भी स्वरूप या परिभाषा को मानने को तैयार नहीं, उनके सामने आपका यह धर्म क्या करेगा। वे तो ऐसे धर्म तथा उसके धारक धार्मिक व्यक्ति को अपना शिकार बनाने में कोई कसर उठाकर नहीं रखते। उन खूंख्वार, छली, कपटी, हत्यारों के सामने आपका यह सत्य, न्याय, दया आदि गुणयुक्त धर्म निरर्थक है। उनके साथ सज्जनता का व्यवहार आत्मघातक है। जैसे भी हो, वैसे ही उस दुष्ट का नाश करना ही वहाँ पर धर्म है।

महाभारत में कीचड़ में रथ का पहिया फंस जाने पर जब निहत्थे कर्ण ने अर्जुन को धर्म की दुहाई देकर बाण छोड़ने से रोकना चाहा तो श्री कृष्ण ने इसका उत्तर यही कह कर दिया था कि चक्रव्यूह में फंस जाने पर अकेले अभिमन्यु को कई महारथियों द्वारा मारा जाने पर तुम्हारा धर्म कहां चला गया था':। अर्थात् जो व्यक्ति जैसा व्यवहार करता है, उसके प्रति वैसा ही व्यवहार करना धर्म है। इस लोकधर्म का पालन न करने के कारण हमे पराजय का मुँह भी देखना पड़ा तथा अपना धर्म भी गंवाना पड़ा। यथा सोमनाथ पर आक्रमण के समय महमूद गजनवी ने अपनी सेना के आगे 300 गायें खड़ी कर दी। धर्मभीरु हिन्दु सैनिक उन पर प्रहार न कर सके। फल स्वरूप मुस्लिम सेना जीत गयी। बाद में उन्हीं मुस्लिमों ने अनेक गउओं तथा गो भक्तों को यमलोक पहुंचा दिया। यदि उस समय कुछ गायों का बलिदान देकर गोधातक मुस्लिम सेना को परास्त कर दिया होता तो हिन्दु धर्म तथा गोवंश की रक्षा हो जाती।

संसार में जो हिन्दु, मुस्लिम, ईसाई, पारसी आदि मजहब या सम्प्रदाय धर्म के नाम से जाने जाते है, यहाँ धर्म का कुछ अन्य ही स्वरूप है। ये धर्म अपनी कुछ विशेष मान्यताओं के आधार पर टिके हैं। इन्हें देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि ऐसा लोकधर्म श्रद्धा, सेवा तथा शक्ति के आधार पर फैला फूला है। शक्ति चाहे तलवार की रही हो, धन की रही हो या राज्य की रही हो। जिसे भी यह शक्ति मिली वही धर्म संसार में फैला तथा उसने इसी शक्ति के आधार पर अन्यों को कुचल दिया। मुस्लिम आक्रमणकारियों ने शक्ति के आधार पर हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया, परिणाम स्वरूप पूरे भारत में मुस्लिम मत फैल गया, अन्यथा से तो थोड़े ही मुसलमान यहां आये थे। इसी प्रकार ईसाईयों ने भी तलवार के बल पर ईसाई मत फैलाया है, इसके साथ ही धन का बल भी इनके साथ है। विदेशों से अरबों रुपया ईसाईयों एवं मुसलमानों के पास इनके संगठनों की सहायता के रूप में प्रतिवर्ष आता है जिसके आधार पर हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन किया जाता है। धर्मान्तरण होते ही उन व्यक्तियों की निष्ठा भी बदल जाती है। इस धर्म के आगे आपका तप, त्याग, सत्य, अहिंसा आदि कुछ काम नहीं आयेंगे। इनका प्रतिरोध तो उन जैसे उपाय कर ही किया जा सकता है। हिन्दु ऐसा नहीं कर रहे हैं, इसलिए यह धर्म सिमटता तथा मिटता चला जा रहा है।

श्रद्धा-भक्ति के तथा विश्वास के आधार पर भी धर्म फैलता है। भारत में पौराणिक धर्म फैलने का कारण यह श्रद्धा-भक्ति तथा विश्वास ही तो है कि मन्दिर

में जाकर मूर्ति पर पुष्प आदि चढ़ा कर जो मांगों वह मिल जाता है। वैदिक धर्म ऐसा नहीं मानता, इसीलिए इसके मानने वालों की संख्या भी कम है। राज्य की शक्ति के आधार पर भी धर्म फैलता है। बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में सम्राट् अशोक का बहुत योगदान रहा है। इसी प्रकार आदि शंकराचायार्य ने सुधन्वा राजा की सहायता से वैदिक धर्म का प्रचार तथा बौद्ध धर्म का पराभव किया था। यहाँ पर मनु या व्यास जी का बतलाया धर्म काम नहीं आयेगा।

सेवा एवं श्रद्धा-भक्ति के आधार पर फैलने वाले किसी भी अवैदिक मत को आप अन्ध श्रद्धा का फल कह कर छोड़ नहीं सकते। अन्धी ही सही, श्रद्धा तो वहां है। इसके अभाव में सत्य वैदिक धर्म भी नहीं फैल सकता। अन्धे व्यक्ति नेत्रों वालों से भी अधिक कार्य कर देते हैं। यही हाल अन्धश्रद्धा का है।

इस प्रकार हमें धर्म के शास्त्रीय एवं दार्शनिक स्वरूप के साथ-साथ उसके लोक प्रचलित स्वरूप तथा प्रभाव को भी देखना होगा। अवैदिक धर्म जिन साधनों के आधार पर फैलता है, उनके मूल में जाकर ही उसका प्रतिरोध किया जा सकता है, अन्यथा नहीं। सत्य वैदिक धर्म के प्रचार-प्रचार के लिए धर्म के नाम चलने वाले पाखण्ड, बर्बरता एवं छद्म सेवा भाव का वास्तविक स्वरूप जनता के सामने रखना होगा, अन्यथा अन्धविश्वास में जकड़ी जनता तो इसे ही वास्तविक समझती रहेगी।

धर्म के नाम शीश कटाने पर भी गर्व किया जाता है। यह भी नासमझी की बात है। धर्म के नाम शीश कटाने नहीं चाहिए अपितु अत्याचारी, अन्यायी अधर्मो का शीश काट लेना चाहिए। धर्म तभी जीवित रहेगा। शीश कटाने से धर्म का आधार नष्ट होने से धर्म भी नष्ट हो जायेगा। मुस्लिम शासन में अपना सतीत्व बचाने के लिए रानी पद्मिनी सहित असंख्य राजप्रतानियों का जौहर इतिहास की धरोहर है। इस पर हमारा सिर उन वीरांगनाओं के आगे सादर प्रणत तो हैं, किन्तु यदि वे स्वयं चिता में नप जलकर हाथों में तलवारें लेकर शत्रु पर भूखी बाघिन की भांति टूट पड़ती तो असंख्य शत्रुओं को मौत के घाट उतार सकती थी। रानियाँ युद्ध विद्या में निपुण होती थी। पराजय की स्थिति में एक दूसरे की छाती में कटार भोंक कर या स्वयं ही अपना सिर कलम करके भी कीर्तिमान स्थापित किया जा सकता था। यह कार्य चिता में जीवित जलने से तो लाख गुणा श्रेष्ठ होता। बिना युद्ध किये मरना कायरता है।

!! ओ३म् !!

पूर्ण ब्रह्मचारी कौन होता है?

-खुशहाल चन्द्र आर्य, कोलकाता

ब्रह्मचारी का तात्पर्य होता है, ब्रह्म में विचरने वाला। ब्रह्म की आज्ञा के अनुसार चलने वाला। ब्रह्म का मतलब होता है सब से बड़ा। देवतओं में सब से बड़ा देवता ईश्वर है। देवता का मतलब होता है देने वाला। ईश्वर हमें जल, वायु, अग्नि, पेड़, पौधे, फल-फूल सब कुछ बिना कोई शुल्क लिये मुफ्त में देता है। सृष्टि को रचता है, पालन करता है और समय के अनुसार उसका संहार भी करता है। और हम जीवों को उसके कर्मानुसार फल भी देता है, इसलिए सब से बड़ा है और बड़ा होने के नाते ब्रह्म कहलाता है। धार्मिक ग्रन्थों में सब से बड़े वेद होते है जिसमें मनुष्य मात्र की सभी कल्याण व हित की बातें लिखी है। जिनके अनुसार चलने से मनुष्य अपने अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। इसलिए वेद धार्मिक ग्रन्थों में सब से बड़े है। इसी प्रकार शरीर में सबसे महत्व पूर्ण व मूल्यवान जो वस्तुत है, वह वीर्य है। इसीलिए वीर्य को भी ब्रह्म कहा गया है। इस प्रकार हमने देखा कि ब्रह्म तीन विशेष शक्तियों को कहा गया है। जो व्यक्ति इन तीनों पर पूरा अधिकार रखता है व पूर्ण ब्रह्मचारी कहलाता है। इन तीनों की हम संक्षिप्त व्याख्या करते हैं जो इसी भाँति है।

2. ईश्वर :- ईश्वर केवल मनुष्यों का ही नहीं बल्कि प्राणी मात्र का बड़ा उपकार करता है। उपर लिखे, अनुसार ईश्वर प्राणी-मात्र को बिना कोई शुल्क लिए मुफ्त में हवा, पानी, बिजली, अन्न, फल-फूल आदि बिना किसी स्वार्थ के जीवों को प्रदान करता है। मनुष्य ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ तथा अन्तिम कृति है। इसलिए इस का विशेष कर्त्तव्य बन जाता है कि वह इस परोपकारी परमपिता परमात्मा के गुण-गान करके अपनी कृतज्ञता प्रकट करे यानि अपने मन को अन्तमुखी बनाकर एकाग्र चित होकर सन्ध्या के द्वारा उसके गुण-गान करे साथ ही उसके गुणों को जैसे दया, करूणा, निष्पक्षता, परोपकारिता आदि को अपने जीवन में धारण करे जिससे अपना तथा दूसरों का जीवन सुखी व सम्पन्न बने। ईश्वर ने हमें उत्पन्न किया है इसलिए ईश्वर हमारा माता-पिता हुआ और हम सब इसके पुत्र व पुत्रियाँ हुए। हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपने पिता के गुणों को अपने जीवन में धारण करें और उसकी आज्ञा का पालन करें। ईश्वर के गुण-गान करने से ईश्वर को कोई लाभ नहीं परन्तु मनुष्य को अनेक लाभ है।

ईश्वर की सन्धया द्वारा स्तुति, प्रार्थनोपासना करने से मनुष्य को अनेक लाभ है। ईश्वर की सन्धया द्वारा स्तुति, प्रार्थनोपासना करने से मनुष्य को उत्साह, उमंग, साहस व एक प्रकार के आनन्द की अनुभूति होता है। जिससे उसके जीवन में सुख व शान्ति की प्राप्ति होती है। इसलिए ब्रह्मचारी को एक सच्चा ईश्वर उपासक भी होना चाहिए। इसके अभाव में वह पूर्ण ब्रह्मचारी नहीं कहलायेगा।

2. वेदः- ईश्वर ने सृष्टि के आदि में जब मनुष्यों की उत्पत्ति तिब्बत के पठार पर की थी, तभी ईश्वर ने चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगीरा था, उनके रहस्य में चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद है, उनका क्रमशः प्रकाश करके उनके मुख से उच्चारित करवाये। जिनमें वे सभी उपदेश व शिक्षाएँ बताई है। जिनके अनुसार चलने से मनुष्य अपने जीवन को तथा दूसरों के जीवन सुखी व सफल बना सकता है। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो सीखाने से सीखता है और बिना सिखाये वह अज्ञानी ही बना रह जाता है। ईश्वर सब मनुष्यों का पिता होनेके नाते इसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने पुत्रों व पुत्रियों को अच्छी शिक्षा दे, जिसको पढ़कर वह अपने जीवन को सुचारू रूप से चला सके और अपने जीवन को उत्तरोत्तर उन्नति करता हुआ मनुष्य का जो अन्तिम लक्ष्य मोक्ष है उसको प्राप्त कर सके। इसलिए मनुष्य पूर्ण ब्रह्मचारी तभी हो सकता है जब वेदों को मन लगा कर पढ़ेगा और उसके अनुसार आचरण करके अपने जीवन व अन्यों के जीवन को सुदर, पवित्र व सुखी बनायेगा। इसलिए पूर्ण ब्रह्मचारी बनाने के लिए इसको वेदों का पढ़ना तथा उसके अनुसार आचरण करना यानि वेदोनुसार चलना बहुत जरूरी है।

3. वीर्य की रक्षा करना :- शरीर में सब से महत्वपूर्ण व मूल्यवान वस्तु वीर्य है, इसलिए भी ब्रह्म की संज्ञा दी गईहै। हम जो भोजन करते हैं, वह भोजन सात रूपों में परिवर्तित हुआ, उसका अन्तिम रूप वीर्य कहलाता है। भोजन जब हमारे पेट में जाता है तो सब से पहले उसका, इस फिर रक्त, फिर मांस, फिर मंज्जा, फिर मेंद। फिर अस्थी (हड्डी) फिरअन्त में वीर्य बनता है। जो बहुत कम मात्रा में बनता हैं वीर्य जैसी कीमती वस्तु को बिना उद्देश्य केवल कुछ क्षणों के लिए सुख का अनुभव करने के लिए उसे व्यर्थ में नष्ट करता है वह बड़ा दुर्भायशाली तो हैं ही साथ ही बड़ा मूर्ख व अज्ञानी भी है। वीर्य को सुरक्षित रखना या खण्डित करना, मनुष्य के जो चार पुरूषार्थ हैं। उनके करने की प्रवृत्ति से सम्बन्धित हैं। वे चार पुरूषार्थ यह है, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

वीर्य की रक्षा करना काम पुरूषार्थ में आता है। मनुष्य का कर्त्तव्य है कि बनाने यानि सच्चाई, ईमानदारी, दया, करूणाा व परोपकारिता आदि को अपने जीवन में धारण करे और काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, लालच, घृणा, द्वेष पर पूरा सयंम व नियन्त्रण रखे और सीमा के अन्दर ही इनका प्रयोग करे तभी मनुष्य सुखी व आनन्दित बन सकता हैं मनुष्य का दूसरा पुरूषार्थ अर्थ है। यह भी धर्म के साथ ही कमाना चाहिए। यदि अर्थ कमाने में धर्म की प्रवृत्ति नहीं रखेंगे तो वह अर्थ, अनर्थ हो जायेगा जिससे वह स्वयं भी दुःखी होगा और दूसरों को भी दुःखों करेगा। तीसरा पुरूषार्थ काम है इसको भी धर्म के अनुसार ही करना चाहिए। जो व्यक्ति अविवाहित रह कर वीर्य की रक्षा का पूरा ध्यान रखता है, वही पूर्ण ब्रह्मचारी होता है। मेरे लिखने का तात्पर्य यही है कि पूर्ण ब्रह्मचारी बनने के लिए मनुष्य को वीर्य की रक्षा करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसके साथ ईश्वर की सही उपासना करना, ईश्वर की न्याय व्यवस्था पर पूरा विश्वास रखना तथावेदों को पढ़कर उसके अनुसार जो अपना जीवन बनाता है, वही पूर्ण ब्रह्मचारी है।

इन अर्थो में हम महर्षि दयानन्द को पूर्ण ब्रह्मचारी कह सकते हैं। जिसने अपने जीवन में कभी भी वीर्य को खण्डित नहीं किया। ईश्वर की सच्ची उपासना की और ईश्वर को सदा अपना रक्षकसमझ कर सदा सत्य पर आरूड़ रहे और कभी भी असत्य से समझौता नहीं किया। वेदों के तो वे प्रकाण्ड विद्वान थे ही और उनको पूरा जीवन वेदानुकूल तो था ही, साथ ही पूरे जीवन वेदों का ही प्रचार व प्रसार किया। इसलिए हम कह सकते हैं कि देव दयानन्द पूर्ण ब्रह्मचारी थे। वीर्य के खण्डित के विषय में महर्षि के जीवन में एक घटना आतीहै कि किसी ने महर्षि से पूछा कि स्वामी जी आपको कभी भी काम वासना नहीं सताती है। तब स्वामी जी ने उत्तर दिया कि मैं मेरे मन को हर समय कार्य में इतना अधिक व्यस्त रखता हूँ कि काम वासना आने का समय ही नहीं मिलता। यदि आती भी होगी तो मन को अत्यधिक व्यस्त देखकर लौट जाती होगी। यह था महर्षि दयानन्द का चरित्र जिसकों मैं हृदय से श्रद्धा पूर्वक नमन करता हूँ।

यज्ञ - जो अग्निहोत्र से ले के अश्वमेध पर्य्यन्त, वा जो शिल्प व्यवहार और पदार्थ-विज्ञान जो कि जगत् के उपकार के लिए किया जाता है, उसको यज्ञ कहते हैं।

-महर्षि दयानन्द सरस्वती

समस्त मानव जाति के कल्याण के लिए-
एक अमूल्य चिन्तन

-डॉ. गंगा शरण आर्य, नई दिल्ली

वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से नित्य एवं स्वतः प्रमाण है जिनकी उत्पत्ति सृष्टि के प्रारम्भ में ईश्वर मानव मात्र के कल्याण के लिए करता है जब तक मानव समाज में इनका समान रूप से पठन्-पाठन तथा तदानुकूल आचरण बना खाता है, तब तक मानव समाज भिन्न-भिन्न शाखाओं में न बटकर एक सूत्र में बंधा हुआ प्रेम पूर्वक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता जाता है जैसे दिन में किसी को दीपक जलाने की आवश्यकता नहीं होती, किन्तु रात्रि होने पर भिन्न-भिन्न दीपकों की भरमार होने लगती है इसी प्रकार से जब वेदों का पठन्-पाठन होने की अपेक्षा मानवकृत ग्रन्थों का पठन्-पाठन शुरू हो जाता है, तब मानव समाज में बुद्धि भ्रम होकर अज्ञान रूपी रात्रि छाने लगती है जो कि धीरे-धीरे मानव समाज में अनेक साम्प्रदायिक दीपक जलवाकर उसके प्रेम रूपी दीपक को बुझाकर द्वेष रूपी अग्नि को भड़काकर देवासुर संग्राम के द्वारा उसका सर्वनाश कराने पर तुल जाती है। ऐसी अवस्था में नदी नालों को ही समुद्र से अधिक मान लिया जाता है, यही इस अल्पज्ञान की पहचान है। आज संसार में जो भी उपयोगी यंत्र, मशीने, कम्प्यूटर आदि तथा अन्य उपकरण आदि बहुत अच्छी तरह से अधिक समय तक यथावत कार्य करते हैं। उसी प्रकार जब उस दिव्य शक्ति ईश्वर द्वारा ब्रह्माण्ड की रचना की गई तो उसने भी सृष्टि के ज्ञान से परिपूर्ण वेद ज्ञान मानव को दिया। इसलिए वेद ज्ञान पर चलने से मानव जाति का कल्याण संभव हो सकता है।

जैसे सूर्य तारे, चंद्रमा, वायु, जल, अन्न आदि प्रत्येक मानव के लिए है वैसे ही वेद ज्ञान भी मानव मात्र के लिए है दुर्भाग्यवश हम लोग आज ईश्वरीय ज्ञान कहे जाने वाले वेद को सर्वथा त्याग कर अन्य अनेकों ग्रन्थों की भूल-भूलैया में भ्रमित हैं। वेद में समस्त ज्ञान मूल रूप से उपलब्ध हैं। वेद में किसी घटना, स्थान व व्यक्ति विशेष का कुछ भी उल्लेख नहीं है। वेद का समस्त ज्ञान पूर्णतया वैज्ञानिक, तर्कपूर्ण तथा प्रकृति क्रम के अनुरूप होकर सार्वभौमिक है। वेद में दिए गए ज्ञान का अवलम्बन लेकर ही समस्त विश्व के मनुष्य समस्त प्रकार से सुखी रह सकते है तथा विश्व में शांति स्थापित हो सकती है। वास्तव में वेद में विश्व की समस्त समस्याओं के लिए प्रत्येक ऋषि महर्षि प्रयत्न करता रहा हैं, दर्शन-शास्त्र, उपनिषद् आदि समस्त वैदिक साहित्य का निर्माण इसलिए हुआ है किन्तु यह मन्द बुद्धि मानव फिर भी इस गूढ़ रहस्य को न समझ कर आपस की खींचातान करते ही रहते हैं तो फिर व्यर्थ के लेखन कार्य में समय लगाने से क्या लाभ? **शेष पेज 22 पर...**

आर्य समाज के नींव के प्रेरणास्रोत ऐतिहासिक महापुरूष प्रारम्भ से सन् 1883 तक

-पं. उम्मेद सिंह विशारद, देहरादून

भावी पीढ़ी के प्रेरणा व श्रद्धा हेतु कुछ विभूतियों के दर्शन-

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने कहा था कि जो व्यक्ति जितनी दूर तक भूतकाल का इतिहास जानता है, वह उतनी ही दूर तक भविष्य का निर्माण कर सकता है। महर्षि दयानन्द जी संसार के सबसे बड़े ऐतिहासिक थे। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश में बड़े-बड़े रहस्य उजागर किये हैं, अनेक चक्रवर्ती राजाओं के नाम गिनाये हैं। युद्धिष्ठिर से लेकर यशपाल तक आर्य राजाओं का इतिहास लिखा है। मुस्लिम राजाओं की चर्चा नहीं की, उनको लुटेरा माना है, राजा नहीं माना है। विदेशियों को अत्याचारी व अन्यायकारी माना है। इतिहास जानने से भविष्य के सुधारवादी द्वारा कर्म का मार्ग खुलता है। इतिहास में राजनीति, सामाजिक अध्यात्मिक, धार्मिक जानकारी मिलती है और ईश्वरीय सत्य इतिहास के तरफ झुकाव होता है।

आर्य समाज के भावी पीढ़ी को जितनी आर्य समाजके इतिहास की जानकारी होगी, उतनी ही श्रद्धाआर्य समाज से होगी। यह छोटासा लेख प्रारम्भ से 1883 तक की आर्य समाज की स्थापना में जिन मनीषियों का त्याग था। हम अति संक्षिप्त में उनके मुख्य-मुख्य नामों की जानकारी दे रहे हैं।

यह सारा कलेवर आर्य समाज का इतिहास प्रथम भाग प्रारम्भ से 1883 तक लेखक डा0 सत्यकेतु विद्यालंकार डी-लिट (पेरिस्ड) प्रोफेसर हरिदत्त वेदालंकार एम0ए0 सातवां और अट्ठारवां अध्याय तथा बीसवें अध्याय का द्वितीय प्रकरण से छांटकर प्रस्तुत किया जा रहा है।

आर्य समाज की स्थापना तिथि- आर्य समाज के स्थापना दिवस पर दो मत हैं। 10 अप्रैल 1875 और 7 अप्रैल 17875। पं0 लेखराम जी ने महर्षि दयानन्द का जो जीवन चरित्र लिखा था, उसमें 10 अप्रैल 1875 को ही प्रमाणित स्थापना दिवस माना है। बम्बई के अनेक समाचार पत्रों में आर्य समाज की स्थापना के विषय में सूचना प्रकाशित हुई थी। आज सायंकाल साढ़ेपांच बजे गिरगांव बाग रोड पर स्थित डा0 मानक जी अदेरज जी के बंगले पर एक सभा होगी। जिसमें पंडित दयानन्द सरस्वती आर्य समाज के गठन विषयक औपचारिक कार्यविधि सम्पादित करेंगे। इस कार्य के प्रति शुभेच्छा रखने वाले सब लोग उपस्थिति होने के लिए निमन्त्रित है।

बम्बई के पहले आर्य समाज के सभासदों की संख्या संवत 1932 (1875 ई0)-

कुल सभासद 96 की संख्या में थे, जिनमें ब्राह्मण प्रभु खत्री, सोनी, बनिया, भाटिया, लुवांणा, मणशाली, चौबे आदि जातियों के सभासद थे।

व्यवस्थापक मण्डली- प्रमुख राजेश्री गिरधारी लाल कोठारी, उपप्रमुख ठाकरसी नारायण जी मंत्री पानाचन्द आनन्द जी पारिख, उपमंत्री अन्ना मार्तण्ड जोशी, खजांची सेवक लाल, करसन दास, उपखजांची श्यामजी विश्राम थे।

सभासद- राजेश्री मूलजीकाठरसी, छबील दास लल्लू भाई, किसन दास उदासी, परसोत्तम नारायण जी, मन्ना शंकर, जैशंक दूबे, हनमन्त राम पीटी, आत्मराम बापू दलवी, बाबू शोखीलाल, झबेरी लाल, बाबू अक्षय कुमार मित्र, रघुनाथ भोपाल देखमुख जी।

महर्षि दयानन्द के सहयोगी तथा उनसे सम्बन्ध कतिपय व्यक्ति- 1. श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा (1857-1930) 2. गोपाल राव हरिदेशमुख लोक हितवादी (1823-1892) 3. महादेव गाविन्द रानाडे (1842-1901) 4. महात्मा जोतीराव गोविन्दराव फूले (1827-1890) 5. केशव चन्द्र सेन (1838-84)6. रमाबाई पण्डिता (1858) 7. हरिशचन्द चिन्तामणी (1877-1879) 8. पं0 भीमसेन शर्मा (1886) 9. देवेन्द्रनाथ ठाकुर (1817-1905) 10. मुंशी समर्थदान (1879-1883) 11. पं. ज्वाला दत्त (1883)

सन् 1883 तक स्थापित आर्य समाज स्थापना दिवस व सूची- उत्तर प्रदेश (रूड़की सन् 1878) मेरठ आर्य समाज सन् 1878 मेरठ आर्य समाज के कुल सभासद व पदाधिकारी की संख्या 81 थी। (आगरा आर्य समाज 26 फरवरी 1881) (देहरादून आर्य समाज 29 जून सन् 1879) (बिजनौर आर्य समाज स्थापना सन् 1881) (फर्रूखाबाद आर्य समाज स्थापना जुलाई 1879) मुरादाबाद आर्य समाज की स्थापना 1879) (शाहजहांपुर सन् 1896) (हरदोई आर्य समाजकी स्थापना सन् 1883 से पूर्व) **पंजाब-** (15) आर्य समाज-राजपूताना में (6) आर्य समाजे बम्बई में (9) आर्य समाजे (10) सिन्धमें 9 आर्य समाज (11) पश्चिमोत्तर देश (48) आर्य समाजे और अन्य समाजे (10) विभिन्न स्थानों पर

संसार के सर्वप्रथम आर्यसमाज काकड़वाड़ी (बम्बई) सभासद पदाधिकारी

1. पं0 श्यामजी कृष्ण वर्मा 2. सेठ छबीलदास लल्लूभाई 3. सेठ सुन्दर दास धर्म सिंह 4. श्री सेवकलाल करसन दास 5. लाला मूलराज 6. लाला मथुरा प्रसाद 11. श्री शिव प्रसाद 12. श्री वंशीधर 13. महाराणा सज्जन सिंह 14. राजाधिराजनाहर सिंह वर्मा 15. श्री जनकधारी लाल 16. श्री गुलाबचन्द लाल 17. रा0ब0 श्री

दुर्गा प्रसाद रईस 18. लाला जगन्नाथ प्रसाद रईस 19. लाला काली चरण रईस 20. बाबू गिरधर लाल वकील 21. पं0 गुरुचरण लाल उपाध्याय 22. बाबू माधोलाल 23. श्री रामलाल लड्ढ़ा 24. लाल रामचरण रईस 25. पं0 कृपा राम 26. स्वामी महानन्द 27. कुंअर भारत सिंह, 28. बाबूजीत राज सिंह, 29. पं0 बन्धु देवजी भारद्वाज 30. रावराजा श्री जवान सिंह जी 31. श्री सुन्दर लाल 32. मुन्शी देवी प्रसाद जी मुंसिफ 33. राजा जय कृष्ण दास 34. श्री बलदेव सिंह रईस देहरादून 35. बाबू भिवनारायण 36. बाबू बद्री प्रसाद 37. मास्टर देवी प्रसाद 38. श्री करसन शाह 38. मनीषी समर्थदान 39. पं0 भीमसेन शर्मा 40. पं0 सेठ लीलाधर हरि 40. सेठ जीवन लाल मूल जी 41. महाराजधिराज यशवन्त सिंह 42. महाराणा प्रताप सिंह 43. डा0 सूरजमल चौहान 44. रावराजा तेज सिंह 45. खान बहादुर फैजुल्ला खां 46. नन्हीं भगतन।

द्वितीय पीढ़ी 1883 के उपरान्त

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली व परोपकारिणी सभा अजमेर के पदाधिकारियों के केवल कुछ नाम प्रस्तुत कर रहे हैं- श्री रामगोपाल जी वानप्रस्थ, श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती, पण्डित ओम प्रकाश जी त्यागी, श्री सोमनाथ मरवाह, पं0 सत्यदेव जी भारद्वाज, वेदालंकार श्रीमती गायत्री देवी भारद्वाज, स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज, प्रोफेसर सुरेन्द्र नाथ जी भारद्वाज, श्री राम लाल जी बहलु, श्री बंशीलाल जी सोफत, श्रीराज मल्होत्रा, डा0 हरि प्रकाश जी आयुर्वेदालंकर, श्री पूरन चन्द जी आर्य, श्रीमती सुशीला देवी जी, कुमारी एन्जेला कोछड़, श्री अरूण कोछड़, श्रीमती सुदर्शन जी कौशल, डा0 श्रीमती शान्ता जी मल्होत्रा, राय साहिबा चौधरी प्रताप सिंह जी, श्रीकृष्णलाल जी आर्य, पं0 हरवंश लाल जी मोदगिल, श्री हरिकृष्ण माथुर, श्री इमन्दर मोहन जी मेहता, डा0 सत्यपाल जी नागर, श्री कुंज विहारी लाल जी, डा0 तुहीराम जी गुप्त, श्री रती राम शर्मा, श्री अमृतपाल जी वेदालंकार, श्री मुनीलाल आर्य जी, श्री राजेन्द्र प्रसाद जी, कविराज श्री योगेन्द्र लाल जी शास्त्री, श्री ठाकुर रामाज्ञा जी वैरागी, श्री डालचन्द जी, श्री जमना प्रसाद जी, श्री वेद प्रकाश जी, श्री देवनाथ जी विद्यालंकार, श्री नवनीत लाल जी आर्य।

अतिरिक्त

राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन व हैदराबाद सत्याग्रह में 80 प्रतिशत आर्य वीरों ने बलिदान दिया था-

निवेदन

श्रद्धेय आर्यो, हम सभी संसार के सर्वोच्च धर्म वैदिक धर्म व ईश्वर का कार्य कर रहे हैं और यह निर्विवाद है कि ईश्वर से केवलहम ही, जुड़े हुए हैं। बाकी तो मनुष्यों की पूजा वह भी मरे हुओं को ईश्वर मानकर कर रहे हैं। ईश्वर का मन्दिर तो

केवल आर्य समाज ही है। बाकी तो देवी देवताओं के कथित मन्दिरों में ही पूजा आरती करते रहते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी से लेकर ऊपर लिखित जो आर्य समाज के नींव में जुड़े थे, उनका ऋण और ईश्वरीय आज्ञा वेदों का प्रचार करके हम उऋण हो सकते हैं। यह भी सत्य है कि तब की सामाजिक परिस्थितियों व चुनौतियों परतन्त्र शासन व रूढ़ी परम्पराओं व धार्मिक अन्धविश्वासों के साथ थी। उस समय की आवाज को सुनकर लाखों आर्यों ने बलिदान दिया था।

अबकी परिस्थितियों बिल्कुल उस समय के विपरीत हैं, तब के आर्य समाज के कार्यों को पहली श्रेणी में और घर के कार्यों को द्वितीय श्रेणी में रखकर कार्य करते हैं। आज हम पहली श्रेणी में घर के कार्य और दूसरी श्रेणी में बचा-खुचा समय आर्य समाज में लगते हैं।

आज के युग की मांग है, आर्य समाज के समक्ष जो वर्तमान चुनौतियों हैं, उसके लिये आन्दोलित होना पड़ेगा। अपना मजबूत संगठन एक नेतृत्व, समान रूपी कार्य आन्दोलन के रूप में करने होंगे। नई पीढ़ी और मानव मात्र हमारे विच[illegible] को सुनने को तैयार बैठे हैं। युग की पुकार है, एक स्वर में एक बुराई का आन्दोलन और मीडिया को अपनी ओर झुकाना अनिवार्य है।

●

.....पेज 18 का शेष

जैसा आप समझते है वैसा नहीं है! देखो भोजन करने से मनुष्य की तृष्णा भले ही न मिटे, किन्तु कार्य करने की शक्ति तो भोजन से प्राप्त होती है। इसी के आधार पर संसार का कार्य सदा ही चलता है। इसी प्रकार से पुस्तक आदि के द्वारा आपस की खीच तान सर्वथा भले ही न मिटे किन्तु विचार शक्ति तो बढ़ती ही है। ज्ञान की परम्परा का मुख्य आधार यह लेखन क्रिया ही है तथा बहुत से व्यक्ति वास्तविकता को समझकर इस खीचतान से ऊपर उठकर संसार सागर से पार भी होते हैं जब छोटे से छोटा कार्य भी अपना फल अवश्य प्रदान करता है तो फिर इतना महान कार्य निष्फल कैसे जा सकता है अत: उत्तम पुरूषों को इस प्रकार के उत्तम कार्यों से कभी विमुख नहीं होना चाहिये, किन्तु अपने पूर्ण (सामर्थ्य) पुरूषार्थ से आगे बढ़ाना चाहिये यही उनका मुख्य कर्तव्य है। यही सब सुधारों का आधार है और यही उत्तम पुरूषों की विशेषता है क्या देखते नहीं है कि संसार में दुष्ट व्यक्ति शक्ति का विस्तार करने के लिए कितना भारी प्रयत्न करते हैं। जब दुष्ट व्यक्ति अपनी दुष्टता को भी छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते तो फिर सज्जन व्यक्ति अपनी सज्जनता कैसे छोड़ सकते हैं। इस सज्जनता रूपी अमोघ शस्त्र को अपनाकर ही सब बुराईयों को जीता जा सकताहै इसलिए इस अमोघ शस्त्र को अपना कर आपस की खीचतान को समाप्त करके सारे विश्व को अपना परिवार समझकर प्रेम का बीज बिखेर कर जाओ तभी मानव जन्म सफल होगा यही परमपिता परमात्मा की पक्षपात रहित अमृत वाणी वेद का मानव मात्र के लिए अमूल्य संदेश है।

हम-तुम भांड हैं

-अभिमन्यू खुल्लर, ग्वालियर

समझदार तो इस शीर्षक पर नाराज हो जायेगा, उत्तेजित होकर सशेष स्वर में कहेगा- आपको अधिकार है कि अपने आपको झांड, गवैया-नचैया, बहुरूपिया या नौटंकीबाज कहे पर दूसरों को झांड कहने का आपको कोई अधिकार नहीं है। यदि मैं कहूं कि उस शब्द का प्रयोग महर्षि ने किया है तो आप अवाक् रह जावेंगे। सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम सम्मुल्लास में ईश्वर के गुण-कर्म, स्वभाव का वर्णन कर उसकी सगुण और र्निगुण व्यक्ति का उल्लेख किया है। ऐसी भक्ति का फल यह बताया है कि ''जैसे परमेश्वर के गुण है, वैसे गुण-कर्म-स्वभाव अपना भी करना और जो केवल झांड के समान, परमेश्वर के गुण कीर्तन करते जाना और अपना चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है। व्यर्थ शब्द का संयोजन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। महर्षि ने चरित्र'' का आदर्श ''परमात्मा'' को ही रखा है। इससे अधिक सबल, सार्थक, र्निदोष, निर्विवाह और कोई आदर्श हो ही नहीं सकता। जो ईश्वर स्तुति चरित्र सुधार के लिये नहीं की जाती उसका करना व्यर्थ है।

पूजा-पाठ के प्रचलित कारोबार को लगभग 40 वर्ष तक 24 घन्टे देख-सुनकर, उनके बीच रह कर, अत्यन्त सुक्षमता से अवलोकन करने के पश्चात् महर्षि का यह मन्तव्य, निष्कर्ष आज भी उतना ही सटीक है जितना उनके काल में था। मेरी तो अत्यन्त अल्प वृद्धि में सम्पूर्ण सत्यार्थ प्रकाश रचना का यह आधार वाक्य है।

सत्यार्थ प्रकाश में अपने मन्तव्य को स्थायित्व प्रदान कर आर्य समाजियों को भी चेतावनी दे दी। लगभग 150 वर्ष आर्य समाज की स्थापना व सत्यार्थ प्रकाश को प्रकाशित हुए, हो चुके हैं। महर्षि के मन्तव्य को कितने आर्य समाजियों ने समझा व अपनाया है, उसका सिंहावलोकन होना चाहिए अन्यथा आर्य समाज और आर्यसमाजियों के रसातल की तो तरफ तीव्र गति से अग्रसर हो रहे कदमों को थामा नहीं जा सकता। मेरा मानना है कि महर्षि के मन्तव्य को जिस पीढ़ी ने समझा व अंगीकार किया, वह पीढ़ी ही समाप्त हो चुकी है। ग्वालियर के जिस आर्यसमाज से मैं सम्बद्ध रहा, वह स्थापना के 125 वर्ष पश्चात् निम्नतम स्तर पर भग्न भवन को लेकर खड़ा है। पतन क्रमागत हुआ और प्रारम्भ होने के पश्चात् उस पतन की गति में तेजी आई। इस बिन्दु पर अभी इतना ही लिखना पर्याप्त है।

प्रसंग पर आता हूँ। आज भी प्रत्येक आर्य समाजी ताल ठोक कर कहेगा कि हम वैदिक धर्मी ही ईश्वर विश्वासी है। ईश्वर के सम्बध में हमारा सोच ही सही है और पूजा-पद्धति भी सही है। ठीक है यदि दोनों बातें सही हैं तो हमारी संख्या वृद्धि होनी चाहिए पर स्थिति यह है कि वृद्धि कम और ह्रास ज्यादा हो रहा है। इसलिये न तो व्यक्तिगत कब में हमें लाभ हो रहा है और नहीं सामाजिक रूप में हमारी वैदिक विचारधारा को स्वीकृति मिल रही है। हम 150 वर्षों में महर्षि के महत्वपूर्ण आशय को जन सामान्य अथवा प्रबुद्ध वर्ग को ही अंगीकार कराने में सफल नहीं हो सके। परिणाम स्वरूप पनपे वैष्णो देवी मन्दिर, बर्फानी बाबा, सत्य साई बाबा पुट्टपार्थी साई बाबा (शिरदी) गायत्री मन्दिर, आसाराम बाबा, रामपाल बाबा, बाबा राम रहीम, निर्मल बाबा आदि। आद्य शंकराचार्य दास स्थापित चारों धाम तो थे, ही उनमें दरगाहें, विशेषकर अजमेर शरीफ भी जुड़ गई है। हिन्दू मन्तगें की इनमें अपार श्रद्धा है, आस्था है। अपार श्रद्धा और अटूट आस्था को तोड़ने में मेरा विश्वास नहीं है; हिम्मत भी नहीं है। हम वैदिक धर्मी अपने चरित्र और आचरण से तथा वैदिक विद्वान प्रवचन और लेखन से बहुत कुछ कर सकते हैं। यह विषयान्तरण नहीं हुआ है बल्कि मुख्य विषय पर आने से पूर्व अपना मूल्यांकन कर आगे बढ़ना उचित प्रतीत हुआ।

15 नवम्बर 2014 को प्लेसनटम् यू. एस.ए. आने से पूर्व विचारतयी, जीवात्मा, पुनर्जनम व कर्मफल सिद्धान्त आदि में उलझी हुई थी। दो लेखों में अपना दृष्टिकोणअभिव्यक्त करने के पश्चात् भी विश्राम नहीं मिल रहा था। यहां आने पर पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय के सुप्रसिद्ध ग्रंथ ''जीवात्मा'' का अध्ययन किया। इसी क्रम में सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम और अष्टम सम्मुल्लास का भी मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया। दूसरे पारायण में गाड़ी सम्मुल्लासों के क्रम पर अटक गई। यदि महर्षि का उद्देश्य केवल वैदिक धर्म की ही स्थापना होता तो प्रथम सम्मुल्लास के बाद ही सप्तम और अष्टम सम्मुलासों के विषयों को ही स्थान मिलना चाहिए था। शिक्षा, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ, सन्यास आदि विषयों में छः सम्मुलास लिखने की बात तो बाद में भी रखी जा सकती थी। दो-तीन दिन बुद्धि को इसी बिन्दु पर अटके रहने दिया। सत्यार्थ प्रकाश की रचना का महर्षि का आशय समझ में आया, आत्मसात हुआ कि तत्व बनाए है। नियमावली में पहिले दो बिन्दु पृथक रूप से रेखांकित नहीं है। दूसरे नियम का समापन इस वाक्यावली से किया है कि ''वह सृष्टिकर्त्ता है और उसकी

उपासना करना योग्य है। इस प्रसंग का समापन सप्तम सम्मुलास में महर्षि उसे नास्तिक कह कर करते है और वह दु:खी रहता है।

सामान्य जन ईश्वर में विश्वास न रखनेवाले को नास्तिक कहते हैं। आप पूछेंगे कि दोनों में अन्तर क्या है? दोनों में अन्तर यही है कि वेदज्ञ विद्वान वेद में चिन्हित किए गए ईश्वर को, जिसकी व्याख्या में अनेक मंत्र उपलब्ध हैं, उसे ही ईश्वर मानते हैं। और सामान्य जन के लिये, तो प्रत्येक वस्तु ईश्वर का स्वरूप ले लेती है जो उसके सरल, सपाट दिलो-दिमाग में वह विश्वास दिला कर उतार दी जाने कि वह वस्तु या व्यक्ति, उसके सब दु:खों, कष्टों और पापों का निवारण कर देने का सामर्थ्य रखना है। चाहे वह केदारनाथ, बद्रीनाथ, काशी, देवघर व उज्जैन के मन्दिरों में योनि आकार के पात्र में स्थापित शिवलिंग ही क्यों न हो? ईश्वरका यह स्वरूप, पढ़ने, लिखने व बोलने में कितना कुत्सित लगना है। यहीं नहीं समाज, चौबीस अवतार जिनमें सांप, सूअर शामिल है, ईश्वर है।

महर्षि दयानन्द ने अनेक वेद वेदांगो, उनकी व्याख्या करने वाले ब्राह्मण ग्रंथो, उपनिषदों के निचोड़ के रूप में, सीधे सरल शब्दों में ईश्वर को परिभाषित कर दिया है। इस परिभाषा के अतिरिक्त कोई ईश्वर नहीं हो सकता। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगेश्वर कृष्ण, महात्मा बुद्ध वाईबिल तथा कुरान में वर्णित कोई भी ईश्वर नहीं। अन्य ईश्वरों को माननेवालों की भर्त्सना ''नास्तिक'' कह कर की है। जब ईश्वरों को मानने वालों का ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान ही अधपका, अधूरा और भटकाने वाला है तो उनकी पूजा-उपासना करने वाले सुखी हो ही नहीं सकते। दु:खी ही रहेंगे।

महर्षि यही नहीं रुके। परिभाषा के क्रम आगे बढ़ाते हुए लिखा कि सगुण और निर्गुण भक्ति क्या है? और उसका फल क्या है! महर्षि लिखते हैं, जैसे परमेश्वर के गुण हैं, वैसे अपने भी गुण स्वभाव करना। जो केवल भाड़ के समान गुण कीर्तन करता जाता है और अपना चरित्र नहीं सुधारता उसका ईश्वर की स्तुति करना व्यर्थ है। जो और व्यर्थ शब्दों का संयोजन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जरा उसके प्रभाव को अनुभव तो कीजिए।

राजाओं और नवाबों के दरबारों में योग्य चाहें हो न हो, परन्तु भांड अवश्य रहते थे। राजाओं का मन बहलाना, मनोरंजन करना उनका काम होता था। एक बार एक राजा के भोजन में बैंगन की सब्जी परोसी गई। राजा को सब्जी बहुत स्वादिष्ट लगी और उसने उसकी बहुत प्रशंसा की। झांड महोदय ने तत्काल कहा, महाराज, एक यही सब्जी है जिसके सिर पर छात्र है। राजा ने कहा वाह-वाह, क्या खूब कहा।

कुछसमय पश्चात् बैंगन की सब्जी फिर राजा के भोजन में आगई। इस बार उसने राजा के पैर में विकार पैदा कर दिया। राजा बहुत नाराज कहा- यह सब्जी बहुत खराब है। झांड महोदय ने धक्का लगाया। महाराज इसीलिये उस सब्जी को बेगुन (बिना गुण वाला) कहते है।

महर्षि ईश्वर सी स्तुति "चरित्र" निर्माण के लिये निर्धारित करते हैं। जिस व्यक्ति ने अपनी समस्त शक्ति, ध्यान यहां तक की ईश्वरोपासना ही चरित्र निर्माण के लिये लगा दी तो वह बुराईयों की ओर आकर्षित ही नहीं होगा। उसके कल्याण का मार्ग स्वयं प्रशास्त होता जायेगा।

अन्य सभी मत (धर्म) वाले ईश्वर स्तुति का फल या लाभ यह बताते है कि ईश्वर स्तुति से मनोकामना की पूर्ति,पापों से, बिना फल भोगे, छुटकारा और स्वर्ग की प्राप्ति। दोनों के मन्तव्यों में जमीन-आसमान का अन्तर है। महर्षि का मार्ग कठिन है, बहुत कठिन है। अन्य मत बालों का बहुत सरल। अन्य मतवाले कहते हैं कि केवल ईश्वर का नाम अपने से ही उपरोक्त तीनों फल मिल जाते हैं। बस आदमी को चाहिए ही क्या? आज भी हजारों साधु-सन्यासी मिल जायेंगे जो नाम जप का महत्व प्रतिपादित कर, विश्वास, दिला देंगे कि इतने ही कार्य से ईश्वर-पूजन की प्रक्रिया समाप्त। नाम का जाप सीधा करो या उल्टा स्वर्ग (कौन सा स्वर्ग?) का द्वार खुला मिलेगा। राम नाम की जगह मरा-मरा भी बोलोगे तब भी। क्योंकि परमात्मा अर्न्तयामी है, भक्त की भावना को समझता है। इसीलिये ये लोग "भावना" के महत्व की बात करते हैं।

सोमनाथ मन्दिर के परिसर में हम पति-पत्नि घूम रहे थे। कुछेक पुजारियों (पूजा के अरियों (दुष्मनों, महर्षि ऐसी पूजा कराने वालो को यही कहते थे) ने कहा कि वह हमारे लिये किसी भी देवता (ईश्वर) का पाठ कर देगा। बस आपको अमुक-ममुक देवता की अमुक-अमुक राशि दक्षिणा देनी होगी हमने स्वयं भी देखा ऐसी पूजा चल भी रही थी। पूछा पूजा का लाभ किसे मिलेगा। उत्तर मिला भक्त को यानि हमें! पूजा करेंगे पुजारी जी और लाभ भक्त को। हे भगवान् कैसा "माया" जाल है।

ईश्वर के गुण-कर्म स्वभाव अपनाने का निर्देश देते हुए महर्षि ने साकेतिक रूप से एक गुण का उल्लेख किया है कि वह न्यायकर्ता है। यह क्षेत्र ऐसा है जिसे बिना कुछ त्याग-तपस्या किए प्रत्येक मनुष्य अपना सकता है। यह गुण, सामाजिक गुणों का विकास करने का बहुत बड़ा आधार बन सकता है। ईश्वर जाति-भेद, रंग-भेद, ऊंच-नीच, सम्पन्नता-विपन्नता, किसी भी कारण से न्याय करने में भेद-भाव नहीं करता। सृष्टि सी रचना कर, उसका निर्मूल्य,

अपनी बुद्धि और सामर्थ्यानुकूल उपभोग करने की व्यवस्था परमात्मा ने कर रखी है। हम पूरी तरह से सृष्टि रचना का सत्यानाश करने पर तुले हुए है। आज हम पानी बेच रहे हैं। कल हवा बेचेंगे। पर्यावरण प्रदुषण इतना बढ़ गया है कि और दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है कि एक-दिन ऑक्सीजन का सिलेंडर लेकर निकलना पड़ेगा। लाशों, कैमिकल्स और मानव द्वारा निमृल गंदगी से नदियां भरी पड़ी है। इन नदियों के जल का आचमन, स्नान-ध्यान, वेद में वर्णित मोक्ष तो नहीं देगा, उदर और त्वचा सम्बंधी रोग जरूर देगा। ईश्वर प्रदत्त सृष्टि के संसाधनों का बुद्धिपूर्वक उपयोग भी, ईश्वर के गुण-कर्म-स्थान अपनाने वाले महर्षि के मंतव्य की पूर्ति करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

ईश्वर भ्रष्टाचार नहीं करता, पाप नहीं करता। खाद्यान्न व औषधियों में मिलावट नहीं करता। ईश्वर कन्या भ्रूण हत्या नहीं करता। क्या आपने इन दुर्गुणों से दूर बहुत दूर, जाकर ईश्वर के निकट, अति निकट आने का प्रयास भी नहीं करना चाहेंगे? या इन दुष्कर्मों में लिप्त रह कर ''झांड'' के समान स्तुति और प्रार्थना ही करते रहेंगे?

सत्पुरूष

जो सत्यप्रिय धर्मात्मा विद्वान सब के हितकारी और महाशय होते हैं, वे सत्पुरूष कहाते हैं।

-स्वामी दयानन्द सरस्वती

चला शहीदी टोला था...

आर्य समाज ने संकट सम्मुख, अपना सीना खोला था।
प्राणों की आहुतियाँ देने, चला शहीदी टोला था।
खड्गधारी यह भुजा शास्त्र ले, जब जब कदम बढ़ाया है।
उसकी वैदक तोपों से, बैरी दल में भय छाया है।
गुरुकुल का ब्रह्मचारी, चलता फिरता बम का गोला था।
प्राणों की.....

घटाटोप तिमिरांगण में, छेड़ी क्रांति की चिनगारी।
न्यौछावर कर दी अपने को, जब भी आयी थी बारी।
धर्मध्वजा फहराने निकला, पहन बसन्ती चोला था।।
प्राणों की.....

हिन्दु फुसफुसिया कहलाता, फिर से संजीवनी दे दी।
दिव्य दृष्टि से पाखण्डों को, चट्टानी छाती छेदी।
सुनों फिरंगी भारत छोड़ो, बच्चा बच्चा बोला था।
प्राणों की.....

धर्म निहन्ता, देशद्रोहियों का, जब जब भाण्डा फोड़ा।
नया सूर्य सत्यार्थ उगाया, अंधकार का गढ़ तोड़ा।
प्राणों की बाजी खेली, पर दिया न सच का डोला था।।
प्राणों की.....

पं. संजय सत्यार्थी
पटना

ग्लोवल वार्मिंग की वार्निंग

-राजेन्द्र प्र. आर्य, मुजफ्फरपुर

प्रत्येक व्यक्ति की अपनी-अपनी समस्या होती है, पर आज हम यहाँ विश्व के 700 करोड़ लोगों को उस से आग्रह करना चाहते है जिसकी गंभीरता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को अपनी अस्तित्व की रक्षा के लिए आने वाले 20-25 वर्षो में प्रकृति के साथ लड़ाई लड़नी होगी, और वह समस्या है ग्लोवल वार्मिंग अर्थात् वैश्विक गर्मी का। वैज्ञानिको का मानना है कि पिछले 100 वर्षो में वातावरण के तापमान में 2 डिग्री की वृद्धि हो गई है, जिस वजह से गर्मी का प्रकोप बढ़ गया है। गर्मी बढ़ने का परिमाण ही है मौसम चक्र में बदलाव। इस मौसम चक्र में बदलाव के कारण ही कहीं सुनामी, कही अत्यधिक वर्षा, कही न्यून वर्षा, कही सुखाड़, कही चक्रवर्ती तूफान, कही बादल कटना कही भू-स्वलखन और भूकम्प के द्वारा दुनिया के अलग अलग हिस्सों में अलग 2 समय में हजारों लाखों लोगों की असमय मौत हो रही हैं, गर्मी बढ़ने के प्रभाव के वजह से ही मानों प्रकृति आज गुस्से में हैं, जिस वजह से प्रकृति इस प्रकार की भयंकर तवाही मचाती है।

वैज्ञानिकों का यह भी मानना है कि अगर समुचित उपाय कर हमें रोका नहीं गया तो यह गर्मी और भी बढ़ती जाएगी और अगर वातावरण में 2 से 3 डिग्री की और वृद्धि हो गई तो उत्तरी ध्रुव के वर्फ और हिमालय क्षेत्र के ग्लेशियर के वर्फ बड़ी तेजी से पिघलने लग जायेंगे जिससे नदियों में प्रलयकारी उफान आ जायेगा और नदियों का पानी चूंकि समुद्र में संग्रहीत होता है इसलिए समुद्र के जलस्तर में वृद्धि हो जाएगी। अगर समुद्र के जलस्तर में 5 से 10 इंच की भी वृद्धि होती है तो भारत समेत दुनिया के अनेक देश पानी में डुब जायेंगे। भारत के भी 12 राज्यों के लगभग 2 लाख गांव समुद्र के किनारे बसते है तो ये सभी गांव तथा अनेक नगर इसमें डूब जायेंगे। मुम्बई और गोवा जैसे शहर तथा हॉलैण्ड जैसे देश इसमें पूरी तरह से डूब जायेंगे क्योंकि इन सबका अस्तित्व समुद्र के जलस्तर से नीचे बना हुआ है।

आज इसकी गंभीरता को देखते हुए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत सारे देश क्वेटो प्रोटोकाल संधिसे जुड़ गये है। अभी कुछ वर्ष पहले क्वेटो (जापान) में दुनिया के 156 देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने इस विषय की गंभीरता को देखते हुए वैज्ञानिकों के एक दलका गठन महान वैज्ञानिक डॉ. आर. के. पचौरी के नेतृत्व में किया जो इस बात का पता लगायेंगे के इसके

कारण क्या है और कैसे इसके संभावित खतरे से दुनिया को बचाया जा सकता है। वैज्ञानिकों के दल ने 4 वर्षों तक निरन्तर शोध और अध्ययन कर इसके कारणों का जो पता लगाया है वो बेहद ही चौकाने वाले है। वैज्ञानिकों के अध्ययन के अनुसार वमें तो इसके छोटे 2 अनेक कारण है पर मुख्य कारण है मनुष्य के जीवनशैली में बदलाव, और जीवन शैली में बदलाव के मुख्य कारण है मनुष्य द्वारा मांसाहार का प्रयोग और उपभोग। बड़े पैमाने पर माँस का उत्पादन, वितरण और उपभोग के वजह से वातावरण में गर्मी बढ़ रही है। उन्होंने इसका वर्गीकरण इस प्रकार का किया है।

1. जरूरी उत्पादन और जरूरी यातायात से 18% गर्मी बढ़ रही है।

2. माँस का उत्पादन और उपभोग से- 28% गर्मी बढ़ रही है।

3. गैर जरूरी उत्पादन और गैर जरूरी ट्रांसपोटेशन से- 32% गर्मी बढ़ रही है।

4. पर्यावरण का प्रदूषण और अन्य छोटे कारणों से 25% गर्मी बढ़ रही है।

वैज्ञानिकों का मानना है कि जरूरी यातायात को तो रोका नहीं जा सकता पर बड़े पैमाने पर माँस का उत्पादन और उपभोग को रोककर 25% गर्मी को कम किया जा सकता है, और अगर माँस का उत्पादन ही रोक दिया जाय तो इसी से सम्बंधित माँस का ट्रांसपोर्टेशन जो कम तापमान पर एअर कंडिशन गाड़ियों द्वारा दुनिया के अन्य देशों में भेजा जाता है, भी रुक जायगा तो इससे 32% गर्मी का बढ़ना रुक जाएगा। फलस्वरूप दोनों मिलाकर 60% गर्मी को कम किया जा सकता है।

यहाँ यह भी सवाल उठता है कि माँसाहार से गर्मी बढ़ने का क्या सम्बन्ध? तो इस सम्बन्ध में उनका कहना है कि बड़े पैमाने पर जानवरों को कत्ल किया जाता है, और कत्ल करने के पूर्व उन्हें भयंकर यातनाएं दी जाती है, जिसे सुनकर ही रोंगटे खड़े हो जाते है। पहले तो उन्हें गाड़ियों में इसे ठूस-ठूस कर कत्लखाने पहुचाया जाता है, फिर उन्हें कई-कई दिनों तक भूखे रखा जाता है, फिर कत्ल करने के पूर्व 100 डिग्री का खौलता पानी का बौछार किया जाता है, उसके बाद जीवित अवस्था में ही उनके खाल शरीर से खिंच लिये जाते है, तब जाकर अन्त में गला रेतकर उनका कत्ल किया जाता है। इस पूरे कत्ल के दौरान वे भयंकर वेदना के साथ चीत्कार करते है उनके वही चीत्कार वातावरण में गूँजते रहते है। जो वातावरण को तरंगित करते है जिस वजह में गर्मी बढ़ती हैं।

आज पूरी दुनिया भर में करीब 28 करोड़ 50 लाख मैट्रिक टन माँस का उत्पादन किया जाता है। 1 मैट्रिक टन में 1000 किलो

होते है, इसके लिए करीब 56 अरब यानि 5 हजार 600 करोड़ बड़े जानवरों का कत्ल प्रतिवर्ष किया जाता है। वैदिक संस्कृति का ध्वजवाहक भारत भी इससे अछुता नहीं है, भारत भी एक प्रमुख माँस का उत्पादक और निर्यातक देश बनकर ढ़ेर सारी विदेशी मुद्राएं अर्जित कर रहा है, यह कितना ही दुखद है। भारत में आज करीब 58 लाख मेट्रिक टन माँस का उत्पादन प्रतिवर्ष किया जाता है इसके लिए भारतवर्ष में अत्याधुनिक हथियारों से लैष 3,600 रजिस्टर्ड कत्लखाने है जबकि अनरजिस्टर्ड तो 36000 होंगे। भारतवर्ष कभी ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में दुनिया का आग्रणी देश रहा है तो भला इसमें पीछे क्यो हो!

जिन जानवरों की हत्याकर माँस का उत्पादन किया जाता है उनमें से सबसे बड़ी संख्या गायों और उसके वंषजों की होती है। फिर उसके बाद सुअरों की संख्या होती है। तीसरे नम्बर पर भैस एवं उसके वंषज आते है, चौथे नम्बर पर भेड़, बकरा एवं बकरी है, और पांचवे नम्बर पर मुर्गा-मुर्गी इत्यादि है, इसके अलावे छोटे-छोटे पशु-पक्षी तो अनगिणत है। इसकी गिनती इसमें नहीं है।

वैसे हत्या किसी भी प्राणी की निन्दनीय है उसपर गाय की हत्या तो महापाप है, क्योंकि गाय का दूध पीकर ही सभी बल, विद्या और बुद्धि अर्जित करते है जिससे शौर्य और पराक्रम दिखा पाते है। गाय के दूध का महत्व तो इसी से जाना जा सकता है कि किसी भी स्तनधारी जीव के बच्चे की माँ गर प्रसव काल के दौरान भर जाती है तो बच्चा दूध के बिना मरेगा नहीं, वो गाय के दूध पीकर जी सकता है, यूं ही नहीं गाय को माता का दर्जा दिया जाता है, उस गाय के दूध का कर्ज इस प्रकार उतारा जाता है। क्या विडम्बना है कि जानवरों की सड़क किनारे पड़ी लाशों को देखकर लोग 15 फीट की दूरी से ही गुजरते है, वहीं कत्लखानों में तैयार जानवरों की लाशों से बने व्यंजनों को फाइव स्टार होटलों के एअर कंडीशन कमरे के डाइनिंग टेबल पर बैठकर शराब के साथ बहुत ही चाव से खाते है। मानवता आज दम तोड़ रही और हम जश्न मना रहे है माँस, शराब और रोमांस के साथ। आखिरं इन बेकसूर और मूक जानवरों का कत्ल क्यों किया जाता है? इन्होंने तो किसी का कुछ विगाड़ा नहीं है, शायद इसलिए कि इनके लिए न तो कोई आयोग है और नही कोई न्यायालय। लेकिन एक न्यायालय है जहां इन्हें न्याय मिलगा और दोषी दंडित किये जायेंगे। लगता है कि वो वक्त आ रहा है।

एकबात और वह यह है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार पूरे विश्व की आबादी 700 करोड़ है। उनमें से 200 करोड़ की

आबादी आज भुखमरी के शिकार है। इसी भूख और कुपोषण के शिकार इनके बच्चे 40,000 प्रतिदिन मर रहे है, वहीं दूसरे ओर कत्ल किये जाने वाले जानवरों को मोटे और चर्बीदार होने के लिए कुल कृषि उत्पादन का लगभग 55 प्रतिशत अनाज इन्हें खिला दिया जाता है। भारत जैसे विकासशील कुल 186 देशों के कृषि उत्पादन का कुल 40 प्रतिशत और अमेरिका जैसे विकसित कुल 16 देशों के कृषि उत्पादन का कुल 70 प्रतिशत यानि लगभग 55 प्रतिशत अनाज इन जानवरों को खिलाया जाता है।

हमारे पास कोई तर्क नहीं है कि हम माँस क्यो खाते है? जबकि प्रकृति ने हमारे खाने के वास्ते हजारों चीजें पहले से उपलब्ध कर रखी है। अगर माँस का उत्पादन, उपयोग और उपभोग पूरी तरह से बंद हो जाये तो हमें क्या-क्या फायदे हो जायेंगे जरा इसे देखिए-

1. माँस का उत्पादन और ट्रांसपोर्टेषन बंद होने से करोड़ों पशुओं की हत्या रूक जाएगी और उन्हें भी अन्य प्राणियों की तरह जीने का अवसर मिल जाएगा।
2. माँस का उत्पादन और ट्रांसपोर्टेशन बंद होने से कुल 25 प्रतिशत और 32 प्रतिशत गर्मी का बढ़ना रूक जाएगा और ग्लोबल वार्मिंग में कमी आयेगी।
3. माँस का उत्पादन बंद हो जाने से जानवरों को खिलाये जाने वाला करीब 55 प्रतिशत अनाज की बचत होगी। इससे 200 करोड़ लोगों की भुखमरी तथा प्रतिदिन करीब 40,000 बच्चों को मौत से बचाया जा सकेगा।
4. माँस का उत्पादन बंद होने से ग्लोबल वार्मिंग से कमी आयेगी जिससे मौसम चक्र संतुलित हो जायेगा फलस्वरूप प्राकृतिक आपदाओं में कमी आएगी।
5. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार मनुष्य शरीर में होने वाली बीमारिया में 159 बीमारी ऐसी है जिसका कारण सिर्फ माँसाहार है तो इन होने वाली बीमारियों से लोग स्वत: बच जायेंगे।

अंत में हमारा आपसे अनुरोध है कि ग्लोबल वार्मिंग को समझे और इसके लिए कुछ पेड़ लगा देना ही काफी नहीं है जबकि आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने लाइफ स्टाइल को बदले और शाकाहारी की ओर प्रवृत होवें क्योंकि जब लाइफ ही खतरे में है तो स्टाइल किस काम की। स्वयं भी जीये और दूसरों को भी जीने दें।

वैदिक धर्म की जय।
महर्षि दयानन्द की जय॥

मानव मात्रके कल्याण का मार्ग -आर्य समाज

-प्रकाश आर्य, महू

आज से हजारों, करोड़ों वर्ष पूर्व और इससे भी अधिक कहें तो अरबों वर्ष पूर्व के मानव की और आज के मानव की शारीरिक बनावट एक समान ही है, इसमें कोई अन्तर नहीं है। पहले भी मानव की 5 कर्मेन्द्रियां और 5 ज्ञानेन्द्रियाँ थीं, और आज के मानव की भी उतनी ही हैं। पहले के मानव के शरीर में जो अंग जहां-जहां थे, आज भी वे वहीं पर हैं। हाँ यदि अन्तर आया है तो वह है उनके रहन-सहन, खान-पान और आचार-विचार में। वर्तमान परिवेश में व्याप्त आधुनिकता में वैज्ञानिक उपलब्धि और विलासिता का महत्वपूर्ण स्थान हैं, इसका प्रभाव मनुष्य के दैनिक जीवन व रहन-सहन पर तो पड़ा ही, किन्तु सबसे अधिक हुआ है उसकी आचरण पर इसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव सभी ओर हो रहा है। आधुनिकता के इस वैचारिक प्रवाह के कारण मनुष्य जीवन आचार, विचार, व्यवहार तेजी से प्रभावित हो रहा हैं, जिसने भौतिक संसाधनों के अति-संग्रह व भोग प्रवृत्ति को अनियन्त्रित कर दिया। पहले का मनुष्य अपनी आय के अनुसार आवश्यकता बनाता था और संतुष्ट रहता था, अपने निर्वाह के साथ-साथ समाज का उपकार करना भी उसकी जीवनशैली का मुख्य अंग था, चारित्रिक दृष्टि से पवित्र था। शोषण, व्यभिचार, अत्याचार, अनाचार, भ्रष्टाचार आदि दूषित प्रवृत्तियों से दूर था। मन, बुद्धि, आत्मा निर्मल थी, जीवन में औपचारिकताओं का, या दिखावे का स्थान नहीं था, वह अपनी संस्कृति के साथ जुड़ा हुआ था।

जब तक यह रहा तब तक यह मानव मनुष्यता के निकट था, शनैः-शनैः जीवन शैली परिवर्तित होती गई और आज भी होती जा रही है। आदमी पहले जहरीले और हिंसक प्राणियों से भयभीत रहता था, परन्तु अब उनसे ज्यादा अपनी ही जाति के प्राणी मनुष्य से भयभीत हैं। इतना पतन क्यों? इस सर्वोत्तम योनी को, कर्म स्वतन्त्रता को, साधनों को पाकर तो मनुष्य को उन्नति कर देवता बनना था, परन्तु वह तो मानव से दानव बनते जा रहा है? क्या कारण हैं? उसका एकमात्र कारण है, आज का मनुष्य यह नहीं मानता है कि मानव योनि में जन्म लेने के पश्चात् भी मनुष्य बनना पड़ता है। इसके लिए मानवीय मूल्यों पर आधारित आचरण को जीवन में आत्मसात कर वैसा जीवन ढालना पड़ता हैं । किन्तु अब वह प्रक्रिया रूक गई, इसी का परिणाम है, मानवता से दूर पाशविकता के निकट मानव बढ़ते जा रहा है।

एक श्रेष्ठ समाज का निर्माण करने की, समाज को यह दिशा, केवल धर्म दिखा सकता है, धार्मिक विद्वान दिखा सकते हैं। क्योंकि धर्म में सब प्राणियों के कल्याण की शिक्षा है, सभी को सुखी करने की शिक्षा है, सभी प्राणियों को मित्रवत् देखने का सन्देश है। परन्तु आज धर्म की व्याख्या बदल गई हैं, धर्म सम्प्रदायों में व्यक्तिगत विचारों में बट गया।

शेष अगले अंक में.......

दूसरी ओर महाभारत काल में दुर्योधन का अनाचार देखने को मिलता है। सफल जीवन के लिये अकेले योग्यता और विद्वता ही आवश्यक नहीं है, अपितु वह योग्यता मर्यादा पालन में और न्याय की रक्षा में पर्यवसित होनी चाहिये। योग्यता और वीरता भीष्म पितामह में उच्च कोटी की थी, उनके नीति पूर्ण उपदेशभी अद्वितीय है।आजीवन अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत और घोर तपश्चर्या का अनूठा उदाहरण भी है परन्तु भरी सभा में द्रौपदी का अपमान अपने पोते की नीचता और खुले अनाचार को देखकर भी चुप्पी साधे रहे और द्रौपदी की पुकार पर धर्म की पहेली बुझानी प्रारम्भ कर दी अनाचार सिर चढ़कर बोलने लगा और सदाचार चुप रहकर लाचारी दिखाने लगा। परिणाम महाभारत का युद्ध।

इस युद्ध के साढ़े पांच हजार वर्षों के बाद जब महर्षि दयानन्द धरा पर आये, तब उन्होंने हर नुक्कड़ पर अनाचार को ही देखा। सदाचार तो पशिचम का गुलाम बनकर रह गई। तब उन्होंने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में मनु स्मृति का प्रमाण देते हुए उद्घोष किया कि ''मनुष्य सम्पूर्ण शास्त्र, वेद, सत्पुरुषों का आभार अपने आत्मा के अविरूद्ध अच्छे प्रकार विचार कर ज्ञान नेत्र करके श्रुति प्रमाण से स्वात्मानुकूल धर्म में प्रवेश करें। इस प्रकार ऋषि मानव मात्र के हृदय में धर्म की स्थापना का भरपूर वकालत किया परिणाम यह निकला कि जब आर्य समाज का प्रचार हुआ तो आर्य समाजियों के आचार-विचार काफी पक्के थे और इसके कारण आर्य समाज का प्रचार प्रसार भी जोर-शोर से हुआ।जब तक सदाचार प्रबल रहा तब-तक आर्य समाज का स्वर्ण युग रहा, परन्तु जैसे ही सदाचार कमजोर हुआ, हर शाखा पर अनाचार का वर्चस्व बढ़ता चला गया। कवि ने कहा है कि-

अच्छे पौधे तो पनपते हैं पानी देने पर।
झार झंखार अपने आप बढ़ते जाते हैं।।''

आज सदाचार का पाठ जन-जन को पढ़ाना होगा। सदाचार को स्वयं में स्थापित करना होगा, साथ ही सदाचार की जो परिभाषा ऋषि ने दिया है उस पर चिन्तन अति आवश्यक है। अच्छे पौधा को सींचने के लिये, खर-पतवार को उखाड़ कर फेकने की आवश्यकता है। जिसने भी ऋषि के सदाचार को नहीं समझाउसकी निकौनी जरूरी है।

सम्पादक

पं० संजय सत्यार्थी

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा बिहार एवं बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना के मार्गदर्शन में
मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा एवं आर्य समाज नेमदारगंज नवादा (बिहार) के तत्वाधान में

मगध प्रमण्डलीय आर्य महासम्मेलन 2015
एवं
चतुर्वेद शतकम् महायज्ञ

योग, आयुर्वेद, एक्यूप्रेशर, स्टीमबाथ, नेचुरोपैथ चिकित्सा शिविर

उद्घाटनकर्त्ता
स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती, सीकर
प्रकाण्ड वैदिक विद्वान एवं संसद सदस्य

भजनोपदेश
बहन संगीता आर्या, सहारणपुर
भजन गायिका

योगाचार्य
आचार्य उमाशंकर आर्य
एवं
देवगोप आर्य

यज्ञ के ब्रह्मा
आचार्यहरिशंकर अग्निहोत्री, आगरा
सरल वक्ता उदभट विद्वान

मुख्य वक्ता
डॉ. सारस्वत मोहन मनीषी, नई दिल्ली
ओजस्वी वक्ता, अन्तर्राष्ट्रीय कवि

भव्य शोभा यात्रा 29 नवम्बर 2015 को अपराह्न 2 बजे से

समय सारणी : प्रतिदिन प्रातः 5 से 7 बजे तक योग शिविर एवं
8 से 12 बजे तक यज्ञ, भजन, प्रवचन एवं वेद कथा
दोपहर : 2 से 5 बजे तक चिकित्सा शिविर
संध्या : 5.30 बजे से रात्रि 10 बजे तक, भजन, प्रवचन एवं काव्य पाठ
मुख्य अतिथि-

तिथि: 29, 30 नवम्बर एवं 1, 2 दिसम्बर 2015 | स्थान : दुर्गा मण्डप प्रांगण नेमदारगंज

निवेदक :-
मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा, गया

डॉ. बच्चू लाल आर्य प्रधान 9801035210	डॉ. रामप्यारे प्रसाद मंत्री- 8757558795 मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा	सत्योम शास्त्री कोषाध्यक्ष 8409291049	डॉ. यू. एस. प्रसाद, स्वागताध्यक्ष प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि, उप सभा, बिहार	डॉ. के. के. सिन्हा, प्रधान युवा आर्य समाज बिहार पं. संजय सत्यार्थी, मंत्री संयोजक- 9006166168 बि. रा. आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना

आर्य समाज नेमदारगंज के पदाधिकारी

अश्वनी कुमार, प्रधान 9905849133	संत शरण आर्य, मंत्री 9122258982	लखी नारायण आर्य, कोषाध्यक्ष 7739082124	सत्यदेव प्र. आर्य, मरूत संरक्षक

प्रेषक :
सभा-मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-८०० ००४

मुद्रित सामग्री

सेवा में,
श्री/मेसर्स..............................
मो०..............................
पो०..............................
जिला..............................
(प्रेषिती के न मिलने पर यह अंक प्रेषक को ही लौटा दें।)

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए संजय कुमार (सत्यार्थी) (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।